Postal Reg. No. M.P./Bhopal/4-340/2017-19
R.N.I.No. 51966/1989,ISSN 2455-2399
Date of Publication 15th June 2018
Date of posting 15th & 20th june 2018

जून 2018 वर्ष 30 अंक 06 मूल्य ₹ 40

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

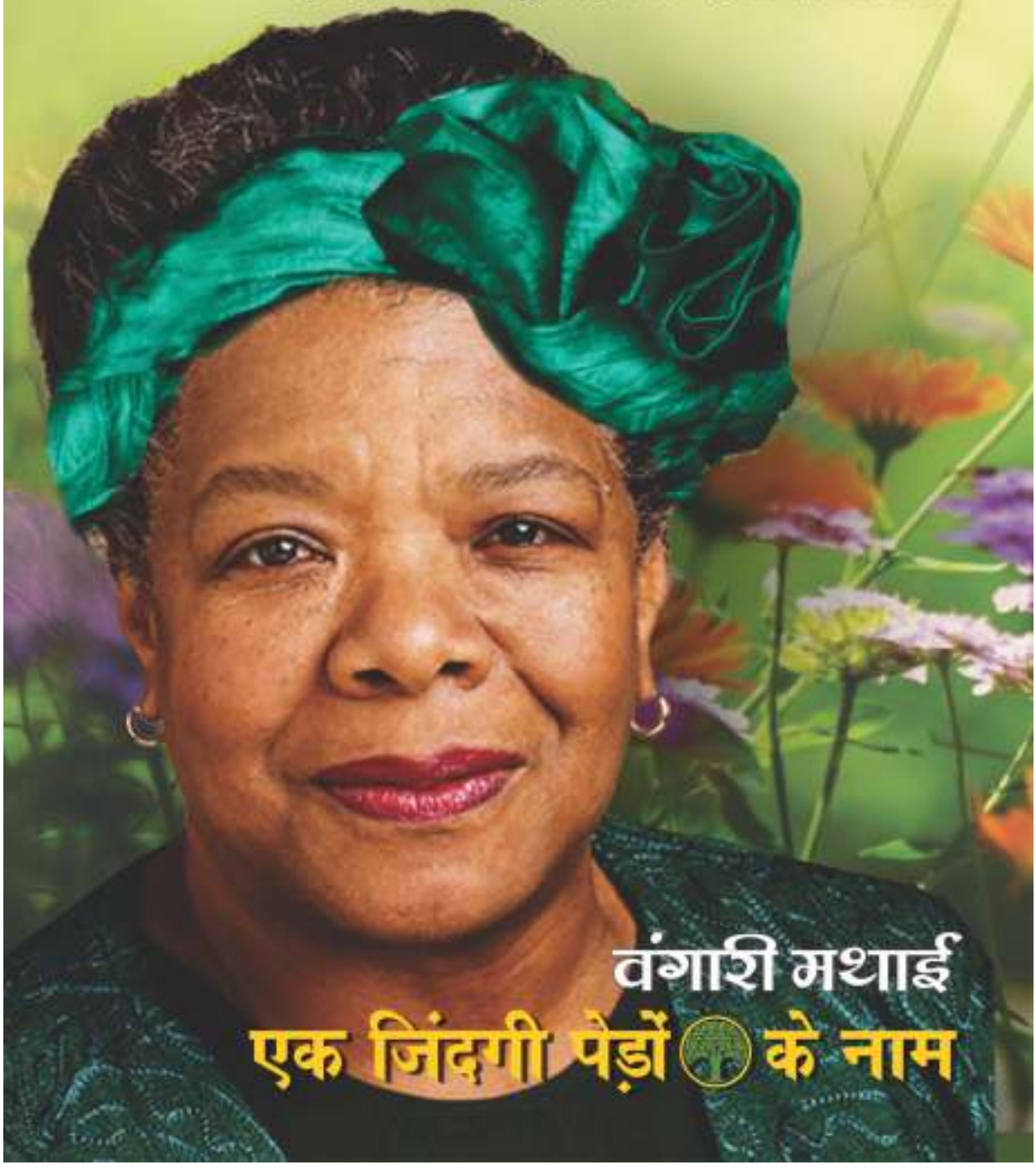

वंगारी मथाई

एक जिंदगी पेड़ों के नाम

RNI No. 51966/1989
ISSN 2455-2399
www.electroniki.com
जून 2018
वर्ष 30
अंक 6

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

सलाहकार मण्डल
शरदचंद्र बेहार, डॉ. वि.दि. गर्दे, देवेन्द्र मेवाड़ी, मनोज पटैरिया,
डॉ. संध्या चतुर्वेदी, प्रो. विजयकांत वर्मा, डॉ. रविप्रकाश दुबे,
डॉ.अशोक कुमार ग्वाल, डॉ.आर.एन.यादव

संपादक
संतोष चौबे

कार्यकारी संपादक
विनीता चौबे

उप–संपादक
पुष्पा असिवाल

सह–संपादक
मोहन सगोरिया, रवीन्द्र जैन, मनीष श्रीवास्तव

संस्थागत सहयोग
अमिताभ सक्सेना, गौरव शुक्ला, डॉ. राघव, डॉ. विजय सिंह,
डॉ. अनुराग सीठा, डॉ. सत्येन्द्र खरे, संतोष शुक्ला

राज्य प्रसार समन्वयक
शशिकांत वर्मा, लातूर सिंह वर्मा, लियाक़त अली खोखर,
राजेश शुक्ला, दर्शन व्यास, शलभ नेपालिया, अंबरीष कुमार, ए.के.सिंह,
हरीश कुमार पहारे, अभिषेक आनंद, निशांत श्रीवास्तव, रजत चतुर्वेदी

क्षेत्रीय प्रसार समन्वयक
राजीव चौबे, जितेन्द्र पांडे, लुकमान मसूद,
आर.के. भारद्वाज, संजीव गुप्ता, रवि चतुर्वेदी, प्रवीण तिवारी,
अरुण साहू, अभिषेक अवस्थी, विजय श्रीवास्तव, के.आई. जावेद,
असीम सरकार, अमृतेष कुमार, योगेश मिश्रा, संदीप वशिष्ठ,
मनीष खरे, आबिद हुसैन भट्ट, दलजीत सिंह, राजन सोनी,
अजीत चतुर्वेदी, अनिल कुमार, अमिताभ गांगुली,
कुम्भलाल यादव, राजेश बोस, देबदत्ता बॅनर्जी, नरेन्द्र कुमार

समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन
राजेश पंडा

आवरण एवं डिजाइन
वंदना श्रीवास्तव, अमित सोनी

मैं प्रकृति का एक हिस्सा हूँ। बिजली की चमक या पर्वत शृंखला जैसी प्राकृतिक वस्तुओं की भाँति, मैं भी अपने निश्चित समय तक जीवित रहूँगा और फिर मिट जाऊँगा। इस संभावना से मुझे भय नहीं लगता, क्योंकि मेरे कुछ कार्य मेरे साथ नहीं मिटेंगे।

– जे.बी.एस.हाल्डेन

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए 287

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

क्रम

विज्ञान वार्ता

बालविज्ञान लेखन मेरे जीवन का ध्येय
● आइवर यूशिएल से डॉ.मनीष मोहन गोरे की बातचीत /05

पर्यावरण विशेष

वंगारी मथाई : एक जिंदगी पेड़ों के नाम
● शुकदेव प्रसाद /08

कटते वन और बदलता पर्यावरण
● विनीता सिंघल /11

प्लास्टिक प्रदूषण से निजात
● सुभाष चंद्र लखेड़ा /14

विकास और पर्यावरण का क़दमताल
● ज़ाहिद खान /20

विकास का विकल्प हरित ऊर्जा
● शुभ्रता मिश्रा / 22

पर्यावरण की सुरक्षा और मृदा का तापमान
● दिनेशमणि / 26

आर्टिफिशियल इंटेलिजेन्स : तकनीक के खतरे भी
● कृष्ण कुमार मिश्र /30

आईआरएनएसएस-1 आई का सफल प्रक्षेपण
● शशांक द्विवेदी /34

डीएनए कानून खोलेंगे जिंदगी के राज
● प्रमोद भार्गव /37

वैज्ञानिक के विचार

रमन का चिर-स्मरणीय प्रभाव
● कपूरमल जैन /40

विज्ञान कथा

समानान्तर विश्व की अन्य समय रेखा
● प्रज्ञा गौतम /44

कॅरियर

भूगर्भ विज्ञान
● संजय गोस्वामी /48

विज्ञान इस माह

पर्यावरण एवं दुग्ध दिवस
● इरफान ह्यूमन /51

संस्थागत समाचार /55

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल–462047

फोन : 0755-6766166 (डेस्क), 0755-6766101, 0755-2432801 (रिसेप्शन), 0755-6766110(फैक्स)

e-mail : electroniki@electroniki.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 480/- प्रति अंक : 40/-

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है।

सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।

स्वामी, आईसेक्ट लिमिटेड के लिये प्रकाशक व मुद्रक सिद्धार्थ चतुर्वेदी द्वारा पहले-पहल प्रिंटरी, 25 ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक- संतोष चौबे।

बाल विज्ञान लेखन मेरे जीवन का ध्येय

आइवर यूशिएल लोकप्रिय बाल विज्ञान लेखक के साथ-साथ एक कुशल चित्रकार भी हैं। '101 साइंस गेम्स' और '101 साइंस एक्सपेरिमेंट्स' शीर्षकवाली लोकप्रिय किताबों के इस लेखक का जन्म इलाहाबाद में 10 अगस्त 1947 को हुआ। लेखक का असल नाम रवि लायटू है लेकिन इस नाम के अंग्रेजी अक्षरों को उल्टा करके ये बन गए 'आइवर यूशिएल' और इस छद्म नाम से ही ये अपने पाठकों के बीच लोकप्रिय हैं।

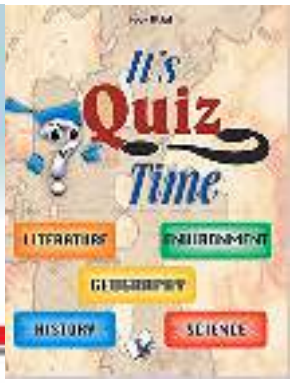

आइवर यूशिएल से डॉ.मनीष मोहन गोरे की बातचीत

● रवि जी, आपने इंजीनियरिंग की पढ़ाई की फिर एक सुनहरा भविष्य छोड़कर लेखन की ओर आपका रुझान कैसे हो गया?

शिक्षा मैंने इंजीनियरिंग के क्षेत्र में ले तो ली, परन्तु कला और साहित्य के प्रति जो रुचि और रुझान मुझे माँ से विरासत में मिला था, वह भला समाप्त कैसे हो जाता? मैं इंजीनियरिंग पूरी कर पाता इससे पहले ही पिता का साया मेरे सिर से उठ गया। फिर कठिनाइयों के बीच माँ के सहारे शिक्षा के अन्तिम दो वर्ष पूर्ण किये। इसके बाद दो-तीन जगह नौकरियों की शुरुआत भी की, पर एक निश्चित दिनचर्या में बंधकर कार्य कर पाना शायद मेरी फितरत में नहीं था। अतः माँ ने मेरी इच्छा के मद्देनजर मुझे रचनात्मक क्षेत्र में प्रवेश की अनुमति दे दी और इस तरह मैं उत्तर प्रदेश से सन् 1970 में दिल्ली आ गया, स्वतंत्र स्तर पर एक आर्टिस्ट व डिजाइनर बनने।

● पर फिर बाल विज्ञान लेखन कैसे शुरू हो गया?

दिल्ली जैसे अनजाने शहर में बिना किसी ठोस आर्थिक आधार के एक बिल्कुल नये क्षेत्र में अपने लिये जगह बना लेना आसान नहीं था। यह तो पहले से स्थापित विवाहिता अग्रजा के पूरे परिवार का यहाँ स्नेहमय सहयोग मिला जो संघर्ष के शुरुआती दौर में मेरी ताकत बना। यहीं से ग्रीटिंग कार्ड की डिज़ाइनिंग से शुरू हुआ कला के क्षेत्र का यह सफर, प्रगति मैदान के अन्तर्राष्ट्रीय मेलों में मण्डपों की आन्तरिक सज्जा के लिये स्वर्णपदक बटोरते हुए, कलादीर्घाओं में अपनी कलाकृतियों की प्रदर्शनी लगाते-लगाते, व्यापारिक स्तर पर इन्हें विदेशों में निर्यात करने के एक बेहतरीन स्तर तक पहुंचकर मुझे पूर्ण स्थापित कर देता, इससे पहले माँ कैंसर की चपेट में आ गईं और उनके साथ ही बहुत से रिश्तों और ख्वाहिशों का भी अंत हो गया। विषाद के इस दौर में डिज़ाइनिंग और पेन्टिंग के निर्माण कार्य पर पूरा ध्यान केन्द्रित कर पाना मुश्किल था पर इसी बीच संयोगवश मुझे पुस्तक महल, दिल्ली से बच्चों के लिए पुस्तकें तैयार करने का प्रस्ताव मिला। यह एक ऐसा लुभावना प्रस्ताव था जिसमें मेरी लेखनी और तूलिका को लगातार क्रियाशील रखने का आश्वासन तो था ही, प्रकाशक की ओर से मेरे लिए समय की कोई बाध्यता भी नहीं थी। यह एक अद्भुत व अनोखा प्रस्ताव था। चूंकि पिछली जमा पूंजी समाप्त हो चली थी और जीविकोपार्जन तो स्वाभिमान के साथ करना ही था। अतः बेमन मुझे इसे स्वीकारना पड़ा। बेमन इसलिये कि लेखन का क्षेत्र मुझे कभी भी प्रतिष्ठापूर्ण नहीं लगा और फिर बच्चों के लिये लिखना तो मुझे लगता जैसे यह कोई बचपने वाला काम हो।

● रवि जी, जीवन के इन तमाम झंझावातों के बीच आपने अपनी रचनात्मकता, अपने भीतर के चित्रकार और लेखक को बचाये रखा, यह सुखद है। अब यह जानने की जिज्ञासा प्रबल हो रही है कि आपकी पहली पुस्तक कब और किस विषय पर आयी?

जहां तक मुझे स्मरण है, जीव-जन्तुओं के ऊपर उनके अपने मुख से अपने गुण-दोषों का बखान करती मेरी पहली पुस्तक 'हम जीव-जन्तु' दिसम्बर 1981 में आयी थी। नन्हीं-सी चींटी से लेकर विशालकाय हाथी जैसे पचास प्राणियों के क्रिया कलापों का वर्णन

'101 मैजिक ट्रिक्स'। इस पुस्तक के विषय में न मेरी कोई रूचि थी और न ही इसकी अप्रत्याशित सफलता का मुझे आभास था। हालांकि व्यावसायिक संभावनाओं के मद्देनजर अप्रत्यक्ष रूप से मैं अपने को पुस्तक के साथ जोड़े भी रखना चाहता था। बस, इसीलिये मैंने अपने वास्तविक नाम (RAVI LAITU) की अंग्रेजी वर्तनी पलटी और इस तरह आइवर यूशिएल (IVAR UTIAL) बन गया।

समेटे इस पुस्तक ने बच्चों को बेहद आकर्षित किया। अब तक बाल-लेखन के इस कार्य को मैंने बहुत साधारण स्तर का आंकते हुए इसे वास्तव में बच्चों के खेल जैसा ही कुछ समझा था। परन्तु इस पुस्तक के प्रकाशन के साथ ही व्यक्तिगत तौर पर और पत्रों के माध्यम से बच्चों द्वारा मिले फीडबैक के आधार पर मुझे जल्दी ही अपनी गलतफहमी का अंदाजा हो गया और मैं समझ गया कि यह काम उतना आसान नहीं जितना मैं अभी तक समझे हुए था। सच कहूं तो पहली पुस्तक के बाद भी इस क्षेत्र में आगे कार्य करने का मेरे मन में कोई उत्साह नहीं था। पर कहते हैं न कि सब कुछ मनचाहा नहीं होता। मुझे भी उस समय की परिस्थितियों के दबाव और प्रकाशक की ओर से लगातार काम देते रहने के आश्वासन ने मुझे इस ओर उन्मुख किया।

● पहली पुस्तक अपने वास्तविक नाम रवि लायटू से, पर इसके बाद छद्म नाम रखकर आइवर यूशिएल बन जाने के पीछे क्या उद्देश्य रहा?

यह एक लम्बी कहानी है कि किस तरह प्रकाशक ने मुझसे पहली पुस्तक लिखाई और इस पुस्तक की व्यावसायिक सफलता शायद प्रकाशक की अपेक्षा के अनुरूप न होने पर प्रकाशक ने अपनी पसन्द पर एक पुस्तक लिखाई जिसका शीर्षक था '101 मैजिक ट्रिक्स'। इस पुस्तक के विषय में न मेरी कोई रूचि थी और न ही इसकी अप्रत्याशित सफलता का मुझे आभास था। हालांकि व्यावसायिक संभावनाओं के मद्देनजर अप्रत्यक्ष रूप से मैं अपने को पुस्तक के साथ जोड़े भी रखना चाहता था। बस, इसीलिये मैंने अपने वास्तविक नाम (RAVI LAITU) की अंग्रेजी वर्तनी पलटी और इस तरह आइवर यूशिएल (IVAR UTIAL) बन गया।

● इसका कुछ लाभ भी मिला?

यह छद्मनाम विदेशी-सा लगता है इसलिए शायद लाभ भी मिला हो, क्योंकि हमारे यहाँ यह धारणा है कि विदेशी लेखकों की किताबें अधिक प्रामाणिक होती हैं। पर इससे ज्यादा रोचक बात यह रही कि मेरे बाल पाठक मुझे अधिकतर रशियन समझकर पत्रों के माध्यम से यह पूछा करते थे कि मैं इतनी अच्छी हिन्दी कैसे लिख लेता हूँ? यह भाषा मैंने वहीं सीखी या भारत आकर?

● बच्चों में पढ़ने की आदत डालने पर आपने बल दिया है। इस हेतु आपने लेखन से क्या प्रयास किए हैं?

पुस्तकों से बढ़ती हमारी दूरी आज की एक बड़ी समस्या है और हमारी जिन्दगी में इन्टरनेट के प्रवेश ने तो इस समस्या को और अधिक गहरा दिया है। टी.वी. और मोबाइल में उलझकर हम पुस्तकों को भूलते जा रहे हैं जो निश्चित तौर पर किसी देश, समाज के लिए बेहद चिन्ता का विषय है। लेखन के क्षेत्र में प्रवेश के साथ ही मुझे रिप्ले की विश्वविख्यात पुस्तक 'बिलीव इट आर नॉट' का हिन्दी अनुवाद का सौभाग्य मिला। 198 देशों में भ्रमण कर रिप्ले ने जो आश्चर्यजनक तथ्य एकत्रित किये थे उन्हें इस पुस्तक में सचित्र दर्शाया है। चित्रों का आकर्षण और साथ में पढ़ने के लिए छोटी-छोटी पठन सामग्री, अनिच्छुक पाठकों को भी अपनी तरफ आकृष्ट कर लेती। मुझे इससे प्रेरणा मिली और ठीक इसी तरीके को आधार बना कर 'विज्ञान चर्चा', 'रोचक सत्य', 'जीव-जन्तुओं का अद्भुत संसार' जैसे बहुत सारे चित्रित फीचर मैंने बच्चों के लिये तैयार किये जिन्हें पत्र-पत्रिकाओं ने हाथों हाथ लिया। बच्चों ने भी इन्हें खूब पसंद किया। काश कि विज्ञान लोकप्रियकरण की तमाम सरकारी-गैरसरकारी संस्थाएँ इस विधा के साथ पुस्तकें तैयार करतीं तो वे अमर चित्रकथा की तरह ही अपने लक्ष्य में निश्चित रूप से सफलता के उच्चतम सोपान पर होतीं।

● इसके अलावा बच्चों में विज्ञान लेखन के आपके कोई और प्रयास?

जी हाँ ! बच्चों का पुस्तकों के साथ जुड़ाव बढ़े और पाठक के तौर पर वे अपनी भी अहमियत महसूस करें, इसके लिए मैंने एक और पहल की। राजनेताओं और प्रशासनिक अधिकारियों के स्थान पर अपनी पुस्तकों का विमोचन बच्चों द्वारा कराने वाला शायद मैं पहला लेखक हूं जिसने पहली बार सन् 2007 के विज्ञान दिवस पर इस परम्परा की ठोस शुरुआत की।

● देशभर के बच्चों से आपको अनगिनत पत्र मिलते रहे हैं। इन पत्रों में मुख्य बातें क्या होती हैं और इनके आधार पर निकले निष्कर्ष के तौर पर आप क्या कहेंगे?

आपका यह प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि यही वे पत्र हैं जिन्होंने बाल-विज्ञान लेखन के क्षेत्र में मेरे पदार्पण की सार्थकता

का मुझे एहसास कराया। इन पत्रों ने मुझे इस क्षेत्र में निरंतर कार्य करते हुए आगे बढ़ने की प्रेरणा और प्रोत्साहन दोनों दिये। अपनी शुरुआती पुस्तकों के माध्यम से मैंने जिस तरह बाल पाठकों से दोस्ती का हाथ बढ़ाया उसे सहज ही स्वीकारते हुए देशभर के हज़ारों-हज़ार बच्चों ने पत्रों के माध्यम से मुझे न सिर्फ अपार स्नेह दिया बल्कि इस पाठक वर्ग ने अपनी सलाह, सुझाव एवं सम्मतियों से मेरा मार्गदर्शन भी किया। इन पत्रों ने मुझे यह समझाया कि महानगरों और बड़े शहरों के बच्चों से अलग, गाँवों और कस्बों के बच्चों में ज्ञानार्जन की अधिक ललक है पर उचित वातावरण एवं सुविधाओं के अभाव में उनकी यह पिपासा अपूर्ण ही रह जाती है। इस तरह भविष्य की संभावित, न जाने कितनी प्रतिभाएं असमय ही अपना दम तोड़ देती हैं और यह दुर्भाग्यपूर्ण है।

● विज्ञान लेखक के अलावा आप एक सिद्धहस्त चित्रकार भी हैं और अपनी तमाम किताबों के रेखाचित्र आपने स्वयं ही बनाये हैं। चित्रों के माध्यम से विज्ञान समझाना विज्ञान संचार की एक विरल धारा है। आपकी अनोखी बातिक कला के बारे में पाठकों को बताएं।

जी हाँ, मूल रूप से मेरी रुचि पेन्टिग और डिजाइनिंग में ही है और अपने कॅरियर की शुरुआत भी मैंने इसी माध्यम से की। बाल-विज्ञान लेखन में मुझे हठात् खींचा जाना भी शायद मेरे इसी गुण के कारण हुआ जिसे मैं प्रकाशक की दूरदर्शिता का परिणाम मानता हूँ। बच्चों के लिए लेखन पूर्ण हो नहीं सकता जब तक उसके साथ चित्र न हों और यह दोनों कार्य यदि एक ही व्यक्ति कर पाये तो प्रकाशक का बहुत-सा सिर दर्द समाप्त समझिये। फिर विज्ञान विषय से संबंधित चित्र बना पाना उस चित्रकार के लिये ही संभव है जिसकी पृष्ठभूमि में विज्ञान विषय रहा हो। इसीलिए पुस्तकों के अनुबंधनों में मुझे कभी कोई कठिनाई नहीं हुई और मैं अपनी शर्तों पर काम कर पाया। बातिक मेरे लिये कला का एक अद्भुत माध्यम रहा है। इस पर मैंने दस वर्षों तक जमकर प्रयोग किये और मेरी अधिकतर कलाकृतियों का निर्यातकों द्वारा विक्रय विदेशों में ही हुआ। दिल्ली की कलादीर्घाओं में मैंने एकल व संयुक्त प्रदर्शनियाँ लगाई और 'दिल्ली स्टेट इंडस्टियल डेवलपमेन्ट में कॉरपोरेशन' की सहायता से न्यूयार्क वर्ल्ड ट्रेड फेयर में इन पेटिंग ने भारत की ओर से प्रतिनिधित्व किया। फिर परिस्थितियों ने बाल-विज्ञान लेखन से जोड़ दिया और यहां बाल-पाठकों से ऐसा अपार स्नेह मिला कि बाकी सब पीछे छूट गया।

● भारत में विज्ञान लेखन और विज्ञान लोकप्रियकरण के प्रयासों के बारे में अपने विचार साझा करें।

मैं आपके इस प्रश्न के केवल उस पक्ष का ही उत्तर दे सकता हूँ जो बाल-विज्ञान लेखन और बाल-विज्ञान लोकप्रियकरण के साथ जुड़ा है। सन् 1981 में जब से मैंने लेखन कार्य अपनाया है, सिर्फ और सिर्फ बाल-विज्ञान लेखन के माध्यम से इसका लोकप्रियकरण मेरे जीवन का ध्येय बना हुआ है। आपके प्रश्न के सन्दर्भ में मैं सीधे तौर पर सिर्फ इतना ही कहना चाहूंगा कि विज्ञान लोकप्रियकरण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से सड़कों पर निकाले जाने वाले मार्च और जत्थे, पटरियों पर दौड़ती रेल, बाल-विज्ञान कांग्रेस जैसे संस्थाओं की गतिविधियाँ, शहर-शहर विज्ञान क्लबों की स्थापना आदि से पहले या कम से कम उसके साथ ही, क्या यह आवश्यक नहीं था कि हम रोचक और आकर्षक बाल-विज्ञान पत्रिकाएँ (खेल खेल में विज्ञान की रोचक संकल्पना पर केंद्रित और सुंदर चित्रों के साथ) निकालते जो सिर्फ अलग-अलग स्तर के बच्चों के लिए ही होतीं। कितना प्रभावशाली रहता यह प्रयास यदि साधारण कीमत पर बच्चों के लिए कुछ ऐसी पत्रिकाएं सर्वसुलभ होतीं जिसमें 'विषय ही नहीं खेल भी है विज्ञान' के कॉन्सेप्ट पर आधारित 'शुगर कोटेड फॉर्म' में रुचिकर पठनीय सामग्री, सुन्दर चित्रों और ले-आउट के साथ सजाकर परोसी जातीं। यह कैसा विज्ञान लोकप्रियकरण है जहाँ हमारे समय की 'विज्ञान लोक' व 'विज्ञान जगत' जैसी एक भी पत्रिका आज बच्चों कें बीच में उपलब्ध नहीं है जिसे पूरी तरह बाल विज्ञान पत्रिका कहा जा सके। यह हमारा दुर्भाग्य है वर्ना एक पत्रिका का जो प्रभाव होता, वह न जाने कितने समारोह, सभाओं, सम्मेलनों और सेमिनारों से ज्यादा प्रभावकारी सिद्ध होता। इसमें संशय नहीं बल्कि मेरी राय में तो हिन्दी-अंग्रेजी के अतिरिक्त प्रत्येक प्रांतीय भाषा में ऐसी एक पत्रिका प्रकाशित होनी चाहिए थी जो देश के विकास का भविष्य तय करने में अहम भूमिका निभाती। मुझे लगता है कि बड़े-बड़े राजनेताओं और शिक्षाविदों द्वारा की गई इस अनदेखी के लिए भविष्य अवश्य प्रश्नचिन्ह खड़ा करेगा।

● युवा विज्ञान लेखकों के नाम आपका कोई सन्देश ?

नई पीढी अपने आप में हर तरह से पूरी तरह सक्षम है, जैसा चाहेगी अपने अनुसार इस देश की दशा और दिशा नियत कर लेगी। वैज्ञानिक उपलब्धियों के आधार पर पूरी दुनिया को दिन पर दिन विकास की राह पर तो बढ़ना ही है और स्वाभाविक है कि अपना देश भी आगे बढ़ेगा ही। हाँ, इतना जरूर है कि इस विकास की रफ्तार अब नई पीढ़ी को तय करनी है, बस।

mmgore1981@vigyanprasar.gov.in

वंगारी मथाई

एक जिंदगी पेड़ों के नाम

नोबेल पुरस्कार समादृत अप्रतिम पर्यावरण विज्ञानी

शुकदेव प्रसाद

समकालीन विज्ञान लेखकों में शुकदेव प्रसाद का नाम अग्र पंक्ति में शुमार है। वे पिछले चार दशकों से विज्ञान लेखन कर रहे हैं। देश विदेश में वे अपने विज्ञान लेखन के लिए उन्हें कई पुरस्कार और सम्मान प्रदान किये गये हैं। कई विज्ञान किताबों की रचना के साथ ही उन्होंने विज्ञान ग्रंथों और संचयन का संपादन किया है। शुकदेव प्रसाद इलाहाबाद में रहते हैं।

नोबेल पुरस्कारों के साथ एक विसंगति है। वर्ष 1901 से आरंभ नोबेल पुरस्कार भौतिकी, रसायन, कार्यिकी (चिकित्सा) के निमित्त तो हैं लेकिन नोबेल प्रतिष्ठान गणित को कोई श्रेय नहीं देता है। यह अपने आप में विस्मयकारी है क्योंकि गणित विद्या तो सारे विज्ञानों की पटरानी है। गणित विद्या न होती तो आज न राकेट होते, न मिसाइलें होतीं, न कम्प्यूटर और न ही संचार क्रांति का पदार्पण होता। बहरहाल, नोबेल पुरस्कार चयन समिति अर्थशास्त्र को भी मान्यता देती है, साहित्य और शांति के लिए पुरस्कार के प्रावधान तो इनके उन्मेष काल (1901) से ही हैं।

आगे चलकर देखा गया कि नोबेल शांति पुरस्कारों की कोटि में पर्यावरण संरक्षण को भी अहमियत दी जानी लगी, कदाचित पर्यावरण की बदहाली से भयाक्रांत मानवता की चीख-पुकार ने नोबेल समिति को उद्वेलित किया हो तभी तो एक साधारण सी कीनियाई महिला, जो कभी पौधरोपण के लिए महिलाओं को कुछ शिलिंग देती थी, ने कालांतर में (2004) नोबेल की बुलंदियों का संस्पर्श किया। उस साधारण सी महिला ने वस्तुतः पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में, अपनी धरती की हरीतिमा बचाने के उपक्रम में असाधारण कार्य किए थे और इस प्रकार वंगारी मथाई को नोबेल शांति पुरस्कार प्राप्त करने वाली प्रथम अफ्रीकी नारी-रत्न होने का गौरव मिला।

नोबेल समिति ने इन शब्दों में उसकी प्रशस्ति की- 'सुस्थिर विकास (Sustainable development), लोकतंत्र और शांति के क्षेत्र में उसके योगदानों हेतु।' यह क्षण कीनिया ही नहीं अपितु समग्र अफ्रीकी जनों के लिए अत्यंत गौरवशाली था।

आगे चलकर अमेरिका के पूर्व उपराष्ट्रपति अल्गोर और आई.पी.सी.सी. (Intergovernmental Panel on Climate Change) को संयुक्त रूप से पर्यावरण के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदानों हेतु नोबेल शांति पुरस्कार प्रदान किया गया। यह दीगर बात है कि

हिमालय के ग्लेशियरों के पिघलने को लेकर आई.पी.सी.सी. की रपट विवादास्पद हो चली और नोबेल पुरस्कार भी संशय के घेरे में आ गया और उस पर प्रश्न चिह्न उठने लगे।

नैरोबी विश्वविद्यालय में अध्यापन करने के साथ–साथ वंगारी का कई सामाजिक संगठनों से भी जुड़ाव हो गया और यहीं से उसकी जिंदगी ने नई करवट ली जिससे उसने प्रसिद्धि के शिखरों को पा लिया। सारी दुनिया में उसकी यशः कीर्ति फैली और उसकी जिंदगी उसके जीवन काल में ही एक पुरा कथा बन गई। न भूतो।

1 अप्रैल, 1940 को कीनिया में जन्मी वंगारी का जीवन संघर्षों की गाथा है और दुनिया के तमाम मजलूमों के लिए प्रेरणा स्रोत भी। उसने 1964 में अमेरिका के बेनेडिक्टाइन कॉलिज से जीव विज्ञान में बी.एससी. की, तदुपरांत 1966 में पिट्सबर्ग विश्वविद्यालय से जीव विज्ञान में मास्टर डिग्री हासिल की। शीघ्र ही यूनीवर्सिटी कॉलिज ऑफ नैरोबी में जंतु विज्ञान के एक आचार्य के साथ अनुसंधान सहायक के रूप में उसकी नियुक्ति हो गई लेकिन जब वह नौकरी के लिए विश्वविद्यालय पहुँची तब उसे जानकारी मिली कि यह नौकरी तो किसी और को दी जा चुकी है। कदाचित ऐसा उसके महिला और आदिवासी होने के कारण हुआ, वंगारी ऐसा मानती थी। दो महीनों तक वह नौकरी पाने के लिए भाग दौड़ करती रही, फिर उसे आशा की किरण नज़र आई जब गीसेन यूनीवर्सिटी, जर्मनी के प्रोफेसर रीनहोल्ड हॉफमैन ने यूनीवर्सिटी कॉलेज ऑफ नैरोबी के स्कूल ऑफ वेटेरीनरी मेडिसिन में अनुसंधान सहायक की नौकरी की पेशकश की। प्रोफेसर हॉफमैन की प्रेरणा से डाक्टोरेट की डिग्री हासिल करने के लिए वह गीसेन विश्वविद्यालय, जर्मनी गई। उसने गीसेन और म्युनिख दोनों विश्वविद्यालयों में शोध अध्ययन किया। 1969 की वसंत में अपना अध्ययन और शोध कार्य जारी रखने के लिए नैरोबी लौट आयी। यूनीवर्सिटी कॉलेज ऑफ नैरोबी में सहायक प्राध्यापक के रूप में उसने अपना अध्यापन जारी रखा और आजीविका का उपार्जन भी। 1971 में उसने यूनीवर्सिटी कॉलेज ऑफ नैरोबी (आगे चलकर नैरोबी विश्वविद्यालय) से पशु शारीरिकी में डाक्टोरेट की उपाधि अर्जित की और इस प्रकार उसे पीएच.-डी. करने वाली पहली पूर्वी–अफ्रीकी महिला होने का श्रेय मिला। 1974 में विश्वविद्यालय में वह शारीरिकी (Anatomy) की वरिष्ठ प्रवक्ता, फिर 1976 में पशु शारीरिकी (Veterinary Anatomy) विभाग की अध्यक्ष और अगले ही वर्ष एसोसिएट प्रोफेसर बनीं। ऐसे उच्च पदों पर आसीन होने वाली वंगारी नैरोबी की प्रथम महिला थी।

नैरोबी विश्वविद्यालय में अध्यापन करने के साथ-साथ वंगारी का कई सामाजिक संगठनों से भी जुड़ाव हो गया और यहीं से उसकी जिंदगी ने नई करवट ली जिससे उसने प्रसिद्धि के शिखरों को पा लिया। सारी दुनिया में उसकी यशः कीर्ति फैली और उसकी जिंदगी उसके जीवन काल में ही एक पुरा कथा बन गई। न भूतो।

सत्तरादि के आरंभ में वह कीनिया रेड क्रॉस सोसायटी की नैरोबी शाखा की सदस्य बन गयी और 1973 में वह इसकी निदेशक बन गयी। वह कीनिया एसोसिएशन ऑफ यूनीवर्सिटी वीमेन की सदस्य तो थी और जब 1974 में वहाँ पर पर्यावरण संपर्क केंद्र की स्थापना की गयी तो उसे इसकी सदस्यता ग्रहण करने का आग्रह किया गया तथा आगे चलकर वह उसकी अध्यक्ष भी बन गयी। उक्त केंद्र ने यूनेप (United Nations Environment Programme-UNEP) के कार्यक्रमों में गैर–सरकारी संगठनों की भूमिका सुनिश्चित की।

1972 में जब स्टॉकहोम में प्रो.मारिस स्ट्रांग की अध्यक्षता में संयुक्त राष्ट्र मानव पर्यावरण सम्मेलन (United Nations Conference on the Human Environment) आहूत किया गया तो इसी के बाद यू.एन.ई.पी. का मुख्यालय नैरोबी में स्थापित किया गया।

मथाई ने एन.सी.डब्ल्यू. के. (National Council of Women of Kenya) को भी ज्वाइन किया और नाना स्वैच्छिक संगठनों से जुड़ने के बाद उसने महसूस किया कि कीनिया की अधिकांश समस्याओं की जडें पर्यावरणीय क्षति से संबधित हैं।

1977 में उसने एन.सी.डब्ल्यू.के. की एक मीटिंग में बदलते पर्यावरण और धरती की बदहाली को लेकर अपनी दुष्चिंता प्रकट की और वृक्षारोपण पर जोर दिया जिसे उक्त कौंसिल का भरपूर समर्थन प्राप्त हुआ। विश्व पर्यावरण दिवस के अवसर पर 5 जून, 1977 को एन.सी.डब्ल्यू.के. ने जुलूस की शक्ल में कीनियात्ता इंटरनेशनल कांफ्रेंस सेंटर, नैरोबी से शहर से बाहर स्थित कामुकुंजी पार्क तक की यात्रा की और ऐतिहासिक सामुदायिक जन प्रतिनिधियों के सम्मान में सात पेड़ रोपे। यहीं से 'ग्रीन बेल्ट मूवमेंट' की आधारशिला निर्मित हुई। मथाई ने अफ्रीका की महिलाओं को पूरे देश में, आसपास के जंगलों में वृक्षारोपण के लिए प्रेरित किया और इसके लिए वह हर पौधरोपण के लिए महिलाओं को कुछ पैसे देने के लिए भी राजी हो गयी और एक दिन उसकी मेहनत रंग लायी, अफ्रीका की तस्वीर बदली, धरती की

25 सितंबर, 2011 को प्रकृति सहचरी, ग्रीन बेल्ट आंदोलन की संस्थापिका, महिला अधिकारों के प्रति जुझारू नेत्री ने दुनिया से विदा ली। यद्यपि प्रो. वंगारी मथाई हमारे बीच अब नहीं हैं, फिर भी उनकी संघर्षगाथा हमारे लिए सतत प्रेरणा पुंज है।

हरीतिमा वापस लौट आयी और प्रकृति सहचरी, पर्यावरण की अप्रतिम अनुरागी वंगारी ने नोबेल की बुलंदियों को संस्पर्श किया।

वंगारी मथाई ने जिस ग्रीन बेल्ट आंदोलन की कीनिया में आधारशिला रखी थी, उसके कार्यकर्ताओं ने अफ्रीका में प्रायः दो से तीन करोड़ पेड़ लगाए। इतना ही नहीं, कीनिया में 1980 से लेकर 1990 तक जंगलों को साफ करने के सरकार समर्थित अभियान के खिलाफ भी उसने आवाज उठायी। इस प्रकार पर्यावरण संरक्षण के प्रति वैश्विक चेतना जाग्रत करने में मथाई ने अप्रतिम भूमिका निभायी और कीनिया की धरती से पर्यावरण संरक्षण का एक संदेश सारी दुनिया में गूंजा। अब तक वंगारी मथाई अफ्रीकी जनमानस में खासी लोकप्रिय हो चुकी थी, सो राजनीति में भी उसका प्रवेश हुआ। वर्ष 2002 में वह सांसद चुनी गई और कीनिया की सरकार में जनवरी, 2003 में पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधान मंत्रालय में सहायक मंत्री बनी और इस पद पर नवंबर 2005 तक आसीन रहकर पर्यावरण की अलख जगायी।

वंगारी मथाई लंबे अरसे से कैंसर ग्रस्त थी। अंततोगत्वा 71 वर्ष की वय में वह जिंदगी की जंग हार गयी और 25 सितंबर, 2011 को प्रकृति सहचरी, ग्रीन बेल्ट आंदोलन की संस्थापिका, महिला अधिकारों के प्रति जुझारू नेत्री ने दुनिया से विदा ली। यद्यपि प्रो. वंगारी मथाई हमारे बीच अब नहीं हैं, फिर भी उनकी संघर्षगाथा हमारे लिए सतत प्रेरणा पुंज है। ऐसे नारी-रत्नों पर सारी मानवता को गर्व और तोष है।

वंगारी मथाई : प्रमुख कृतियाँ

● द ग्रीन बेल्ट मूवमेंट : शेयरिंग द एप्रोच एंड द एक्सपीरिएंस (1985) ● द बाटम इज़ हेवी टू : इवन विद द ग्रीन बेल्ट मूवमेंटः द फिफ्थ एडिनबर्ग मेडल एड्रेस (1994) ● बॉटल नेक्स ऑव डिवेलपमेंट इन एफ्रीका (1995) ● द कैनोपी ऑव होप : माई लाइफ कैम्पेनिंग फॉर एफ्रिका, वीमेन एंड द इनविरान्मेंट (2002) ● अनबाउड : ए मेमॉयर (2006) ● रिक्लेमिंग राइटस एंड रिर्सोसेज वीमेन, पावर्टी एंड इनविरान्मेंट (2007) ● रेनवाटर हारवेस्टिंग (2008) ● स्टेट ऑव वर्ल्ड्स माइनारटीज (2008) ● द चैलेंज फॉर एफ्रिका (2009) ● रिप्लेनेशिंग द अर्थ (2010)

वंगारी मथाई को मिले पुरस्कार-सम्मान

● राइट लिवलीहुड एवार्ड (वैकल्पिक नोबेल पुरस्कार), 1984 ● बेटर वर्ल्ड सोसाइटी एवार्ड, 1986 ● ग्लोबल 500 रोल ऑव आनर, 1987 ● गोल्डमैन इनविरान्मेंटल प्राइज, 1991 ● द हंगर प्रोजेक्ट्स एफ्रिका प्राइज़ फॉर लीडरशिप,1991 ● एडिनबर्ग मेडल (विज्ञान के द्वारा मानवता के सर्वोत्तम अवदान हेतु), 1993 ● जोन एडम्स लीडरशिप एवार्ड, 1993 ● बेनेडिक्टाइन कॉलिज ऑफरएमुस मेडल, 1993 ● द गोल्डेन आर्क एवार्ड, 2001 ● द जुलिएट होलिस्टर एवार्ड,1994 ● ग्लोबल इनविरान्मेंट एवार्ड, 2003 ● जे. स्टर्लिंग मोर्टन एवार्ड, 2004 ● कंजर्वेशन सांइटिस्ट एवार्ड, कोलंबिया विश्वविद्यालय, 2004 ● पेट्रा केली प्राइज, 2004 ● सोफाई प्राइज, 2004 ● नोबेल शांति पुरस्कार,2004 ● लीज़न डि' ऑनर, 2006 ● वर्ल्ड सिटीजन एवार्ड, 2007 ● इंदिरा गांधी पुरस्कार,2007 ● क्रास ऑव द आर्डर ऑफ सेंट बेनेडिक्ट, 2002 ● एलिजाबेथ ब्लैकवेल एवार्ड, होबर्ट और विलियम स्मिथ कालिजों की ओर से, 2008 ● एन ए ए सी पी इमेज एवार्ड - चेयरमैन्स एवार्ड (एल्गोर के साथ), 2009 ● ग्रैंड कार्डन ऑव द आर्डर ऑव द राइजिंग सन ऑव जापान, 2009 ● द निकोल्स-चांसलर्स मेडल, वैंडरबिल्ट विश्वविद्यालय, 2011

sdprasad24oct@yahoo.com

कटते वन और बदलता पर्यावरण

विनीता सिंघल

डॉ.विनीता सिंघल ने जीवविज्ञान में डी-लिट और विज्ञान लोकप्रियकरण में एम.फिल किया है। वे तीस वर्षों तक विज्ञान प्रगति, साइंस रिपोर्टर जैसी विज्ञान पत्रिकाओं की सह-संपादक रहीं। सात सौ से अधिक मूल लेख एवं चालीस से अधिक किताबें लिखी तथा बीस से अधिक पुस्तकों का संपादन एवं अनुवाद किया। आप राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवं सूचना स्रोत संस्थान नई दिल्ली से सह-संपादक के पद से सेवानिवृत्त हुईं। आप दिल्ली में रहती हैं।

वन राष्ट्र की अमूल्य संपदा होते हैं। ये किसी देश की समृद्धि और संपन्नता के सूचक होते हैं। वनों का हमारे समाज तथा संस्कृति से बहुत गहरा संबंध रहा है। प्राचीन ग्रंथों तथा लेखों में भी वनों की महत्ता का प्रचुर वर्णन मिलता है। आज भी धार्मिक अथवा सांस्कृतिक उत्सवों में पेड़ों की पूजा होती है। वन एक ऐसे क्षेत्र को कहते हैं जहां वृक्षों का घनत्व बहुत अधिक हो। वन एक ही तरह के पेड़ों के भी हो सकते हैं और यह भी हो सकता है कि एक ही क्षेत्र में कई प्रकार के वृक्षों की भिन्न जातियां हों। भूमंडल का लगभग 9.4 प्रतिशत क्षेत्र वनों से ढका है जो कुल भूमि क्षेत्र का 30 प्रतिशत है। किसी समय धरती का कुल 50 प्रतिशत हिस्सा वनों से आच्छादित था, लेकिन मनमाने ढंग से की गई वनों की कटाई और प्रबंधन के अभाव में वनों का क्षेत्रफल तेजी से कम होता गया। वन हर उस जगह पाए जा सकते हैं जहाँ की जलवायु पेड़ पौधों के विकास में सहायक हो। यह हरे भरे क्षेत्र न सिर्फ अपार जैवविविधता के भंडार और अनगिनत जीव जंतुओं के निवास स्थान हैं बल्कि हमें लकड़ियाँ, ईंधन, बांस और अन्य लाभदायक उत्पाद भी उपलब्ध कराते हैं। इसके अलावा पशुओं का चारा, उनके चरने के स्थान एवं व्यावसायिक और औद्योगिक रूप से आवश्यक पदार्थ मिलते हैं जैसे कि इमारती लकड़ी, चारकोल, कागज बनाने के लिए सामग्री, गोंद डाई एवं अन्य पदार्थ।

वनों की आवश्यकता क्यों हैं और इनका पर्यावरणीय महत्व क्या होता है? आज हर कोई इस बात से परिचित है। वन किसी भी क्षेत्र के पर्यावरण का एक प्रमुख अंग होते हैं। पर्यावरण संतुलन बनाए रखने में वनों की बहुत ही अहम भूमिका होती है इसीलिए कहा जाता है कि अगर हमें धरती पर पर्यावरण को बचाना है तो वनों को बचाना हमारी सबसे पहली प्राथमिकता होनी चाहिए। बहुत सारी पर्यावरणीय समस्याओं के पीछे वास्तव में तेजी से सिमटते जा रहे वनों का क्षेत्र ही मुख्य कारण है। वन जलवायु रक्षक भी होते हैं। इसके बावजूद भी अज्ञानतावश तो कभी जानबूझ कर मानव द्वारा वनों का विनाश किया जाता रहा है।

भारत में लगभग हर प्रकार के वन तथा विविध किस्म के पेड़ पौधे पाए जाते हैं। ये वन अनगिनत पक्षियों, जानवरों तथा कीटों के लिए निवासस्थल का काम करते हैं। भारत में 16 प्रकार के वन पाए जाते हैं जैसे कि उष्णकटिबंधीय वर्षा वन, उष्णकटिबंधीय पर्णपाती वन, शीतोष्ण वन, हिमालय के वन, पूर्वी हिमालय के चौड़ी पत्तियों वाले वन, पश्चिमी हिमालय के अल्पाइन छोटे वृक्ष तथा मैदान, उष्णबंधीय कंटीले वन और ज्वारीय वन आदि। इन्हें फिर छोटे प्रकारों में विभाजित किया गया है। उष्णकटिबंधीय वर्षावन काफी घने, गर्म तथा नम होते हैं। हमारे देश की वन संपदा काफी समृद्ध है। जरूरत इसे संरक्षित रखने की है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 2011 को अंतरराष्ट्रीय वन वर्ष घोषित किया था जिसके बाद 28 नवंबर 2012 को संयुक्त राष्ट्र संघ की ही एक जनसभा में हर वर्ष अंतरराष्ट्रीय वन दिवस मनाए जाने का प्रस्ताव पारित हुआ। तब से हर साल 21 मार्च को अंतरराष्ट्रीय वन दिवस के रूप में मनाया जाता है और हर वर्ष के लिए एक अलग थीम होती है जैसे -

- *वर्ष 2018 की अंतरराष्ट्रीय वन दिवस कि थीम है ''फॉरेस्ट्स एंड सस्टेनेबल सिटीज''।*
- *वर्ष 2017 की अंतरराष्ट्रीय वन दिवस कि थीम थी ''फॉरेस्ट एंड एनर्जी''।*
- *वर्ष 2016 की अंतरराष्ट्रीय वन दिवस कि थीम थी ''फॉरेस्ट एंड वाटर''।*
- *वर्ष 2015 की अंतरराष्ट्रीय वन दिवस कि थीम थी ''फॉरेस्ट। क्लाइमेट। चेंज''।*
- *वर्ष 2014 की अंतरराष्ट्रीय वन दिवस कि थीम थी ''माई फॉरेस्ट। आवर फ्यूचर''।*

वन विनाश के प्रमुख कारण दोषपूर्ण वन नीति, पशुओं द्वारा अनियंत्रित चराई, स्थानान्तरणशील खेती, वनों में आग लगना, बांध एवं सड़क का निर्माण करना, वनों का अंधाधुंध कटाव, औद्योगिक उत्पादन, व्यापारिक फसलों का उत्पादन, कीड़ों-दीमकों एवं बीमारियों का प्रकोप आदि मुख्य हैं। वन विनाश के अनेक दुष्परिणाम हमारे सामने हैं। इनमें इमारती एवं जलाऊ लकड़ी का अभाव, वृक्ष जातियों का विनाश, भूमि अपरदन में वृद्धि, भू-स्वखन में वृद्धि तथा जलवायु परिवर्तन मुख्य हैं। जहां तक वन विनाश से जलवायु परिवर्तन की बात है हम जानते हैं कि वन पारिस्थितिक तंत्रों को संचालित करने वाले जैव भू-रसायन चक्रों के नियामक होते हैं। इनमें जलचक्र और कार्बन चक्र प्रमुख हैं। वन विनाश के कारण कार्बन चक्र में गड़बड़ी पैदा हो जाती है और यही जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण होता है। वनों के क्षेत्रफल में निरंतर कमी एवं वायुमंडल में कार्बन डाइ ऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड, सल्फर डाइ ऑक्साइड आदि गैसों की वृद्धि से कार्बन चक्र की क्रिया बढ़ रही है। एक सर्वेक्षण के अनुसार प्रतिवर्ष वायुमंडल में पांच हजार टन कार्बन कारखानों एवं अन्य स्रोतों से जा रहा है। वन एवं मिट्टी से एक दो अरब टन तक कार्बन वायुमंडल में पहुंच रहा है, जिसका 80 प्रतिशत उष्ण कटिबंधीय वनों के नष्ट होने के कारण उत्पन्न हो रहा है। अध्ययनों के अनुसार कार्बन की वायुमंडल में बढ़ती मात्रा का जलवायु पर विशेष प्रभाव पड़ रहा है। इस प्रभाव को ग्रीन हाउस प्रभाव कहते हैं। वायुमंडल में तापमान में वृद्धि के फलस्वरूप जलचव प्रभावित होगा। वायुमंडल में तापमान की इस वृद्धि का प्रभाव कृषि पर भी व्यापक रूप से पड़ेगा। यद्यपि फसलों पर कार्बन डाइ ऑक्साइड की वृद्धि का प्रत्यक्ष लाभ होता है लेकिन 2 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान वृद्धि तथा वर्षा की मात्रा असीमित रहने पर फसलों की उपज 3 से 17 प्रतिशत तक कम हो जाती है। इस तरह कार्बन डाइ ऑक्साइड में बहुत अधिक वृद्धि का जलवायु पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। अम्ल वर्षा भी इसी तथ्य पर आधारित है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि वन नष्ट होते हैं तो जल नष्ट होता है, जल नष्ट होने से मानव, पशु एवं पादप जगत नष्ट होता है, भूमि की उर्वरता नष्ट होती है और फसलों का उत्पादन कम हो जाता है। वन विनाश के कारण वनों से प्राप्त होने वाले उत्पादों में तो कमी आती ही है, साथ ही हमारा आंतरिक एवं बाहरी पारिस्थितिक तंत्र असंतुलित होने से संकट उत्पन्न हो जाता है और अंततः संपूर्ण जीव जगत के लिए खतरा उत्पन्न हो जाता है। अध्ययनों के अनुसार लगभग सात हजार वर्ष पूर्व थार मरुभूमि में पर्याप्त वर्षा होती थी जबकि आज थार एक रेगिस्तान में बदल चुका है और इस रेगिस्तान का फैलाव राजस्थान, गुजरात, पंजाब, हरियाणा होते हुए दिल्ली तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश की ओर बढ़ रहा है और भविष्य में असम तक हो सकता है। इसका मुख्य कारण वनों के विनाश से उत्पन्न जलवायु परिवर्तन ही है। स्पष्ट है कि एक ओर जहां वनावरण नम हवाओं को रोक कर वर्षा प्रदान करता है, वहीं दूसरी तरफ मरुस्थल के विस्तार को भी रोकता है।

कितनी बड़ी विडंबना है कि विश्व स्तर पर वनों की मांग प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है और दूसरी ओर तीव्र गति से वनों का क्षरण हो रहा है। कभी पृथ्वी का 70 प्रतिशत स्थल वनाच्छादित था, वही आज मात्र 16 प्रतिशत में संकुचित हो कर रह गया है। वनों के संकुचन के दुष्परिणाम भी मानव के सम्मुख प्रदूषण, अल्पवर्षा, हरितगृह प्रभाव, बाढ़ और अनुर्वरता के रूप में सामने आ रहे हैं। इनमें से प्रत्येक संकट स्वयं में इतना गंभीर है कि यदि समय रहते इन पर ध्यान नहीं दिया गया तो निश्चित रूप से आने वाले समय में मानव के अस्तित्व पर प्रश्न चिन्ह लग जाएगा। कभी कभी वन अनियंत्रित बाढ़, तीव्र चक्रवातों या दावाग्नि की भेंट चढ़ जाते हैं। गर्म और शुष्क मौसम में बाँसों और इसी प्रकार के अन्य वृक्षों के पारस्परिक घर्षण से वनों में आग लगने की घटनायें होती रहती हैं जिससे विशाल भूखंडों में फैले वन स्वाहा हो जाते हैं। वनों के विनाश को वन प्रबंधन, वन रक्षण एवं वन संरक्षण के माध्यम से रोका जा सकता है। वनों और वन संपदाओं का संरक्षण किसी भी देश में केवल शासन का ही उत्तरदायित्व नहीं है। सबसे जरूरी बात तो यह है कि हमें अपनी उपभोगतावादी आदत को बदलना होगा।

हमारे देश की वन संपदा काफी समृद्ध है। जरूरत इस बात की है कि हम इसे संरक्षित करें। इसी प्रयास के लिए भारत सरकार ने 1980 में वन संरक्षण अधिनियम लागू किया जिसे 1988 में संशोधित किया गया। इस अधिनियम के तहत वनों तथा वन्यजीवों के संरक्षण के लिए कई नियम बनाए गए हैं जैसे कि वनों की भूमि का कोई अपने निजी कामों के लिए इस्तेमाल नहीं कर सकता है या वृक्षों को काटकर वहाँ कॉफी, रबर, मसाले आदि की नकदी फसलें नहीं लगाई जा सकती हैं। वनों के संरक्षण के लिए अनेक कठोर नियम भी बनाए गए हैं जिनके उल्लंघन पर जुर्माना तथा सजा, दोनों का ही प्रावधान है। लेकिन दुख की बात है कि तमाम कायदे कानून के बावजूद आज वनों से प्राप्त उत्पादों का अंधाधुध दोहन हो रहा है और वृक्षों की कटाई हो रही है।

सरकारें कुछ कायदे कानून बना दें, केवल इससे ही बात नहीं बनेगी। स्वयंसेवी समूहों एवं संस्थाओं को भी वनों को बचाने के लिए आगे आना पड़ेगा। श्री सुंदरलाल बहुगुणा का 'चिपको' आंदोलन तथा दक्षिण भारत का 'एप्पिको' आंदोलन वन संपदाओं को बचाने की दिशा में ठोस और सार्थक कदम रहे हैं। पीपल, बरगद, गूलर और पाकड़ की लकड़ियों को पवित्र एवं पूज्य माना जाना भी वन संरक्षण की दिशा में उठाया गया एक सार्थक कदम है। 'ग्रीनपीस' इस दिशा में सचेत एक अंतरराष्ट्रीय संस्था है। वन संरक्षण संबंधी शोधों के लिए विश्व भर में अनेक संस्थान भी स्थापित किए जा चुके हैं। इसी प्रकार इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए और भी स्वयंसेवी एवं स्वैच्छिक संस्थाओं को गठित किए जाने की प्रबल आवश्यकता अनुभव की जा रही है।

सभ्यता के विकास के प्रारम्भ से लेकर वर्तमान समय तक वन संसाधन का अतिशय दोहन होता आ रहा है। कहीं कृषि विस्तार के लिए, तो कहीं नदी घाटी परियोजनाओं के लिए, कहीं सड़क निर्माण के लिए, तो कहीं शुद्ध व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए वनों का सफाया किया जाता है। प्रतिदिन लाखों वृक्ष प्रगति की अंधी दौड़ के शिकार होते जा रहे हैं। ये सब वे खतरे हैं जो न सिर्फ वनों को बल्कि प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से हम सभी को प्रभावित करते हैं। जैसे आज अकसर जंगल के समीपवर्ती इलाकों में जंगली जानवरों के हमलों की घटनाएं आम बात हैं क्योंकि हम अपने आवास के लिए वन्यजीवों के आवास उजाड़ रहे हैं। इसलिए जरूरत है कि हर प्रकार से वनों का संरक्षण किया जाए और इस संपदा को आने वाली पीढ़ियों के लिए भी बनाए रखा जाए। अगर वन नहीं रहेंगे तो हमारा सांस लेना भी दूभर हो जाएगा क्योंकि वातावरण में ऑक्सीजन का स्थान जहरीली गैसें ले लेंगी। वन और पर्यावरण का अटूट संबंध है। पर्यावरण को बचाना है तो वनों को बचाना ही होगा। आज हमें अपने पूर्वजों की प्राचीन अरण्य संस्कृति से प्रेरणा लेने की जरूरत है जहां इंसानों का वनों तथा वन्य प्राणियों के साथ सहअस्तित्व हुआ करता था। विश्वव्यापी दोहन के इस युग में हम धरती की घटती हरियाली की पुनर्स्थापना वन प्रबंधन एवं वन संरक्षण से ही कर सकते हैं। अगर वनों के विनाश को नहीं रोका गया तो हमारा विनाश भी अवश्यम्भावी है।

vineeta_niscom@yahoo.com

'भोपाल के पक्षी'
लेखक : डॉ. स्वाति तिवारी
प्रकाशक : आईसेक्ट विश्वविद्यालय
मूल्य : 400 रुपये

'भोपाल के पक्षी नामक' पुस्तक में प्रवासी पक्षियों के जीवन के वैज्ञानिक पक्ष उजागर हुए हैं। पक्षी सभी उम्र के व्यक्तियों के लिए आकर्षण का केंद्र बने रहते हैं। पक्षियों को जानने की जिज्ञासा जैसे- वे कहां से आते हैं और कहाँ पाए जाते हैं, उनका भोजन, अंडा और अन्य विशेषताओं से संबंधित जानकारी इस पुस्तक में उपलब्ध कराई गई है। लेखिका डॉ.स्वाति तिवारी स्वयं जीव-विज्ञान की विद्यार्थी रही हैं और उन्होंने पक्षियों को अपने कैमरे में कैद कर पुस्तक के माध्यम से उपलब्ध कराया है। लेखिका को विश्वास है कि इसे पढ़कर पाठक स्वयं बर्ड वॉचिंग कर सकेंगे।

कई संगठनों की संचालक डॉ. तिवारी का हिन्दी साहित्य में भी महत्वपूर्ण स्थान है। अब तक उनकी 15 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। आपको कई उल्लेखनीय सम्मान और पुरस्कार प्राप्त है जिसमें राष्ट्रीय मानवधिकार आयोग दिल्ली का सम्मान, वगेश्वरी सम्मान, राष्ट्रीय लाड़ली मीडिया पुरस्कार शामिल हैं। आप अफ्रीका और भारत के विश्व हिन्दी सम्मेलन में मध्यप्रदेश शासन का प्रतिनिधित्व कर चुकी हैं।

प्लास्टिक प्रदूषण से निजात

सुभाष चंद्र लखेड़ा

इस 5 जून को एक बार फिर 'विश्व पर्यावरण दिवस' के नाम पर देश और दुनिया के सभी लोगों का ध्यान उन समस्याओं की तरफ खींचेंने की कोशिश की जाएगी जो मानव सहित सभी प्राणियों के अस्तित्व को चुनौती दे रही हैं। दरअसल, चिंता की बात यह है कि ये समस्याएँ दुनिया ने खुद अपने लिए पैदा की हैं। इन समस्याओं की जड़ में वह औद्योगिक क्रान्ति है जिसकी वजह से अट्ठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध तथा उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में कुछ पश्चिमी देशों के तकनीकी, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्थिति में काफी बड़ा बदलाव आया। यह सिलसिला ब्रिटेन से आरम्भ होकर पूरे विश्व में फैल गया। "औद्योगिक क्रांति" शब्द का इस संदर्भ में उपयोग सबसे पहले आरनोल्ड टायनबी ने अपनी पुस्तक "लेक्चर्स ऑन दि इंड्रिस्ट्रयल रिवोल्यूशन इन इंग्लैंड" में सन् 1844 में किया था। औद्योगिक क्रान्ति का सूत्रपात वस्त्र उद्योग के मशीनीकरण के साथ आरम्भ हुआ। इसके साथ ही लोहा बनाने की तकनीके आयीं और शोधित कोयले का अधिकाधिक उपयोग होने लगा। कोयले को जलाकर बने वाष्प की शक्ति का उपयोग होने लगा। वस्त्र उद्योग में शक्ति-चालित मशीनों के आने से उत्पादन में जबरदस्त वृद्धि हुई। उन्नीसवी सदी के प्रथम दो दशकों में पूरी तरह से धातु से बने औजारों का विकास हुआ। इसके परिणाम स्वरूप दूसरे उद्योगों में काम आने वाली मशीनों के निर्माण को गति मिली। उन्नीसवी शताब्दी में यह पूरे पश्चिमी यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका में फैल गयी।

जहाँ एक ओर इस औद्योगिक क्रान्ति के कारण मानव को कई ऐसे लाभ हुए जिनसे उसके जीवन में भारी बदलाव आया, वहां दूसरी ओर बीसवीं सदी के चौथे-पांचवे दशक से यह महसूस किया जाने लगा कि यदि इस औद्योगिक क्रान्ति का उपयोग सोच-समझ कर नहीं किया गया तो अन्तोगत्वा ये जल, जमीन, जंगल और धरती के समूचे पर्यावरण और पारिस्थितिकी प्रणालियों को प्रदूषित कर मानव और अन्य सभी जीवों का जीना दूभर कर देगी। कारखानों की विशालकाय चिमनियों और आधुनिक वाहनों से निकलने वाला धुआँ वायु को जहरीला बनाने लगा तो इन कारखानों और वाहनों से निकलने वाले अपशिष्ट जल को प्रदूषित करने लगे। कृषि कार्यों में संश्लेषित रसायनों के अंधाधुंध इस्तेमाल से धरती की मिट्टी प्रदूषित होने लगी तो बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जंगलों का विनाश होने लगा। अब दुनिया के सभी जागरुक लोग यह महसूस करने लगे कि आधुनिक प्रौद्योगिकी के कारण धीरे-धीरे वह प्राकृतिक व्यवस्था चरमराने लगी है जो सभी जीव-जंतुओं और पेड़-पौधों के लिए बेहद जरूरी है। कीट और कवक नाशियों के बेतहाशा प्रयोग से दुनिया में क्या कुछ हो सकता है इसकी तरफ सर्वाधिक ध्यान खींचा "साइलेंट स्प्रिंग" शीर्षक से 27 सितंबर, 1962 में छपी उस पुस्तक ने खींचा जिसकी लेखिका एक अमेरिकन महिला राशेल कार्सन थी। इस पुस्तक ने पहले तो अमेरिकियों का और फिर पूरी दुनिया का ध्यान उन मुद्दों की तरफ खींचा जो

रक्षा शरीरक्रिया एवं संबद्ध विज्ञान संस्थान (डिपास), डीआरडीओ से वरिष्ठ वैज्ञानिक के पद से सेवानिवृत सुभाष चंद्र लखेड़ा लोकप्रिय विज्ञान लेखक और बेबाक वक्ता हैं। डिजिटल मंचों पर वे पिछले कुछ वर्षों से अपने यात्रा संस्मरणों को समय-समय पर लिखते रहे हैं। ये संस्मरण वैज्ञानिक आधार पर इतने खरे उतरते हैं कि पाठकों ने इसे एक नई विधा का स्वरूप मान लिया। सुभाष चंद्र लखेड़ा हार्डकोर विज्ञान संबंधी शोध के समानान्तर आम जन को विज्ञान की गूढ़ बातें सरल भाषा में साझा करते आये हैं। आप दिल्ली में रहते हैं।

पर्यावरण संरक्षण के हिसाब से बेहद अहम थे और हैं। कार्सन के बाद तो अन्य दूसरे लेखकों का ध्यान भी "औद्योगिक क्रांति" के दुष्प्रभावों की तरफ गया और धीरे-धीरे दुनिया यह समझने लगी कि उसे आधुनिक प्रौद्योगिकियों की वजह से जो सुख-सुविधाएं मिलती रही हैं, उनकी कीमत उसे आज नहीं तो आने वाले वर्षों में चुकानी होगी। इस दौरान पर्यावरण प्रदूषण के परिणाम अम्ल वर्षा, ओज़ोन की छतरी में छेद, कुछ पादप और जीव-जंतुओं का लुप्त होना, वैश्विक तापमान में वृद्धि, ग्लेशियरों का पिघलना, जलवायु में अनपेक्षित बदलाव आदि धटनाओं के रूप में नजर आने लगे।

पर्यावरण प्रदूषण की समस्या पर सन् 1972 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने स्टॉकहोम (स्वीडन) में विश्व भर के देशों का पहला पर्यावरण सम्मेलन आयोजित किया। इसमें 119 देशों ने भाग लिया और पहली बार सर्वसम्मति से 'एक ही पृथ्वी' का सिद्धांत मान्य हुआ।

आख़िरकार, पर्यावरण प्रदूषण की समस्या पर सन् 1972 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने स्टॉकहोम (स्वीडन) में विश्व भर के देशों का पहला पर्यावरण सम्मेलन आयोजित किया। इसमें 119 देशों ने भाग लिया और पहली बार सर्वसम्मति से 'एक ही पृथ्वी' का सिद्धांत मान्य हुआ। इसी सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (United Nations Environment Programme) का जन्म हुआ तथा प्रति वर्ष 5 जून को पर्यावरण दिवस आयोजित करके दुनिया को प्रदूषण की समस्या से अवगत कराने का निश्चय किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य पर्यावरण के प्रति जागरूकता लाते हुए राजनीतिक चेतना जागृत करना और आम जनता को प्रेरित करना है। पर्यावरण-सुरक्षा की दिशा में भारत उन देशों में अग्रणी रहा है जो पर्यावरण सुरक्षा को एक अहम सवाल मानते हैं। फलस्वरूप, हम तभी से प्रति वर्ष 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाते रहे हैं।

पहला " विश्व पर्यावरण दिवस 5 जून 1973 के दिन स्वीडन की राजधानी स्टॉकहोम में आयोजित किया गया। इसके बाद यह सिलसिला अपनी निरंतरता बनाये हुए है और प्रति वर्ष पर्यावरण से जुड़े एक विषय को लेकर यह दिवस मनाया जाता है। अभी तक संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के तहत प्रारंभ से लेकर आज तक जिन विषयों (थीम) को लेकर यह दिवस मनाया गया है, उनमें 'केवल एक पृथ्वी प्रदर्शनी 74 (1974); जल : जीवन के लिए महत्वपूर्ण संसाधन (1975); ओज़ोन परत पर्यावरणीय चिंता (1976); भूमि हानि एवं मृदा क्षरण (1977); विनाश रहित विकास (1978); हमारे बच्चों के लिए सिर्फ एक भविष्य-विनाश रहित विकास (1979); नए दशक के लिए एक नई चुनौती : विनाश रहित विकास (1980); भूजलः मानव खाद्य श्रृंखला में जहरीले रसायन (1981); स्टॉकहोम के बाद दस वर्ष (पर्यावरणीय सरोकारों का नवीयन, 1982); खतरनाक अपशिष्ट का प्रबंधन एवं निपटान : अम्ल वर्षा और ऊर्जा (1983); मरुस्थलीकरण (1984); युवा : आबादी और पर्यावरण (1985); शांति के लिए एक वृक्ष (1986); पर्यावरण एवं पनाहगाह : छत से कुछ अधिक (1987); जब लोग पर्यावरण को पहली वरीयता देंगे, विकास को अंत में(1988); वैश्विक तापक्रम वृद्धि, वैश्विक चेतावनी (1989); बच्चे और पर्यावरण (1990); मौसम परिवर्तनः वैश्विक साझेदारी (1991); केवल एक पृथ्वी, देखभाल और सहभागिता (1992); गरीबी और पर्यावरण - दुष्चक्र अवखंडन (1993); एक पृथ्वी एक परिवार (1994); हम सभी लोग : वैश्विक पर्यावरण के लिए एकजुट (1995); हमारी पृथ्वी, हमारा पर्यावास, हमारा आवास (1996); पृथ्वी पर जीवन के लिए (1997); पृथ्वी पर जीवन के लिए- अपने सागर बचाएं (1998); हमारी पृथ्वी - हमारा भविष्य - बस इसे बचाइए (1999); पर्यावरण सहस्राब्दी - कर्म का समय (2000); जीवन के विश्व्यापी जाल से जुड़ें (2001); पृथ्वी को एक मौका दें (2002); जल-इसके लिए तरसते दो अरब लोग (2003); सागर और महासागर कैसे-मृत या जीवित (2004); हरित नगर-पृथ्वी के लिए योजना (2005); मरुस्थल एवं मरुस्थलीकरण - शुष्कभूमि का मरुस्थलीकरण न करें (2006); पिघलती बर्फ़-एक ज्वलंत विषय (2007); आदत ठुकराओ-कार्बन खर्च में किफायत करो (2008), धरती आपको पुकार रही है- जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए एकजुट हों (2009); अनेक प्रजाति, एक ग्रह, एक भविष्य (2010); वनः प्रकृति आपकी सेवा में (2011); हरित अर्थव्यवस्था : क्या आप इसका हिस्सा हैं (2012); सोचो, खाओ, बचाओ-भोजन की बर्बादी घटाएं (2013); छोटे टापू तथा मौसम में परिवर्तन (2014); एक विश्व, एक पर्यावरण (2015); दुनिया को बेहतर बनाने वाली दौड़ में शामिल हों (2016) और लोगों को प्रकृति से जोड़ना (2017) शामिल हैं।

यह हर्ष का विषय है कि इस वर्ष के विश्व पर्यावरण दिवस 2018 की मेजबानी के लिए हमारे देश को चुना गया है। विश्व पर्यावरण दिवस के लिए इस वर्ष का विषय (थीम) है-प्लास्टिक प्रदूषण को समाप्त करना। दरअसल, यह सिलसिला स्टॉकहोम (स्वीडन) से शुरू हुआ था और तब से लेकर अब तक "विश्व पर्यावरण दिवस" की मेजबानी के लिए दुनिया के किसी एक देश और किसी एक शहर को चुनने की परंपरा चली आ रही है। भारत को यह मौका दूसरी बार मिल रहा है। इससे पहले हमें यह मौका सिर्फ एक बार दिया गया और

अनुमान के अनुसार इस वक़्त दुनिया में प्रति वर्ष एक खरब (ट्रिलियन) प्लास्टिक के थैले इस्तेमाल करने के बाद कचरे में तब्दील हो रहे हैं। शोधकर्ताओं का कहना है कि औसतन हम ऐसे थैलों का उपयोग सिर्फ 12 मिनट की समयावधि के लिए करते हैं। ये थैले कई तरह के प्लास्टिक पदार्थों से बनाए जाते हैं जिनमें पॉलीथीन सबसे अधिक इस्तेमाल होता है।

विश्व पर्यावरण दिवस 2011 हमारे देश की राजधानी नई दिल्ली में संपन्न हुआ था। यूं पर्यावरण-सुरक्षा की दिशा में भारत उन देशों में अग्रणी रहा है जो पर्यावरण सुरक्षा को एक अहम सवाल मानते हैं। फलस्वरूप, हम प्रति वर्ष 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाते रहे हैं।

प्लास्टिक से बनी वस्तुओं का जमीन या जल में इकट्ठा होना प्लास्टिक प्रदूषण कहलाता है पिछले चालीस वर्षों के दौरान दुनिया के सभी देशों में प्लास्टिक की खपत में बेतहाशा ईजाफ़ा हुआ है। सन् 2015 में दुनिया में 3220 लाख मीट्रिक टन प्लास्टिक का उत्पादन हुआ। अकेले यूरोप में 580 लाख मीट्रिक टन प्लास्टिक का उत्पादन हुआ। दुनिया के एक चौथाई प्लास्टिक का उत्पादन चीन में होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका तक अपनी प्लास्टिक जरूरतों को पूरा करने के लिए चीन से इसका आयात करता है। सन् 2014 के लिए उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार सन् 2014 में विश्व भर में पॉलीएथीलीन (पीई), पॉलिप्रोपिलीन (पीपी), और पॉलिविनाइल क्लोराइड (पीवीसी) की सर्वाधिक खपत 68 किलोग्राम प्रति व्यक्ति संयुक्त राज्य अमेरिका की थी। यूरोपियन क्षेत्र में यह तब 50 किलोग्राम प्रति व्यक्ति, जापान में 46 किलोग्राम प्रति व्यक्ति, चीन में 38 किलोग्राम प्रति व्यक्ति, मेक्सिको में 30 किलोग्राम प्रति व्यक्ति, ब्राजील में 26 किलोग्राम प्रति व्यक्ति और भारत में 8 किलोग्राम प्रति व्यक्ति थी। प्लास्टिक पदार्थों की खपत में पूरी दुनिया में पिछले चार दशकों में कितना बदलाव हुआ है, इसका अंदाजा उन आंकड़ों से लगाया जा सकता है जो विभिन्न देश या देशों के समूह के लिए इस वक़्त उपलब्ध हैं। एक अध्ययन के अनुसार सन् 1980 में संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा और मेक्सिको में प्लास्टिक की प्रति व्यक्ति औसत खपत 46 किलोग्राम, पश्चिम यूरोप में 40 किलोग्राम, जापान में 50 किलोग्राम, सेंट्रल यूरोप और सोवियत यूनियन में 9 किलोग्राम, एशिया में (जापान को छोड़कर) 2 किलोग्राम, मिडिल ईस्ट और अफ्रीका में 3 किलोग्राम और पूरी दुनिया के लिए यह औसत 11 किलोग्राम था। सन् 2014 के लिए उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार तब यह खपत संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा और मेक्सिको में प्लास्टिक की प्रति व्यक्ति औसत खपत 139 किलोग्राम, पश्चिम यूरोप में 136 किलोग्राम, जापान में 108 किलोग्राम, सेंट्रल यूरोप और पूर्व सोवियत यूनियन से जुड़े देशों में 48 किलोग्राम, एशिया में (जापान को छोड़कर) 36 किलोग्राम, मिडिल ईस्ट और अफ्रीका में 16 किलोग्राम और पूरी दुनिया के लिए यह औसत 45 किलोग्राम था।

प्लास्टिक के थैले-थैलियों की शुरूआत बीसवीं शताब्दी के सातवें दशक से हुई। अमेरिका में किराने के सामान के लिए प्लास्टिक के थैलों की शुरूआत यूं तो सन् 1979 में हुई लेकिन बड़े पैमाने पर इनका इस्तेमाल सन् 1982 से प्रारंभ हुआ। एक मौटे अनुमान के अनुसार इस वक़्त दुनिया में प्रति वर्ष एक खरब (ट्रिलियन) प्लास्टिक के थैले इस्तेमाल करने के बाद कचरे में तब्दील हो रहे हैं। शोधकर्ताओं का कहना है कि औसतन हम ऐसे थैलों का उपयोग सिर्फ 12 मिनट की समयावधि के लिए करते हैं। ये थैले कई तरह के प्लास्टिक पदार्थों से बनाए जाते हैं जिनमें पॉलीथीन सबसे अधिक इस्तेमाल होता है। आस्ट्रेलिया में प्रतिवर्ष लगभग चार अरब और कनाडा में प्रतिवर्ष लगभग तीन अरब प्लास्टिक के थैले इस्तेमाल किए जाते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में यह आंकड़ा दस अरब के आसपास है। पूरी दुनिया की बात करें तो हम प्रति मिनट दस लाख प्लास्टिक बैग इस्तेमाल कर उन्हें कचरे में तब्दील करते हैं। चिंता की बात यह है कि कचरे में तब्दील प्लास्टिक को पुनः चक्रित करके उसे फिर से उपयोग में लाने का कोई सरल-सस्ता तरीका फिलहाल उपलब्ध नहीं है। फलस्वरूप, कचरे के रूप में फेंके हुए प्लास्टिक के दो सौ थैलों में से हम सिर्फ एक थैले को पुनः चक्रित (रीसाइकल) कर पाते हैं जिसे नगण्य कहना उचित होगा। समस्या की सबसे बड़ी वजह यह है कि अन्य दूसरे पदार्थों की तरह प्लास्टिक के कचरे का सूक्ष्मजीवी अपघटन नहीं होता। फलस्वरूप, प्लास्टिक का कचरा कई सौ साल तक ज्यों का त्यों अपनी मौजूदगी बनाए रखता है। अपने देश में भी हम विभिन्न राज्यों द्वारा लगाए हुए प्रतिबंधों के बावजूद आज भी प्लास्टिक के थैलों-थैलियों का इस्तेमाल करने में कोई संकोच नहीं करते हैं।

चिंता की बात तो यह है कि प्लास्टिक का उपयोग लगातार बढ़ता जा रहा है। अन्य देशों की तरह भारत में भी प्लास्टिक की खपत कम होने के कोई आसार नजर नहीं आ रहे हैं। इस समय हमारे यहाँ प्रतिवर्ष लगभग 36 लाख मीट्रिक टन पॉलीथीन की खपत है जो अगले दस वर्षों के दौरान 82 लाख मीट्रिक टन हो सकती है। यहाँ यह तथ्य उल्लेखनीय है कि जिन देशों में जितना अधिक प्लास्टिक का उपयोग होता है, वहाँ समस्या उतनी ही जटिल है।

प्लास्टिक मुख्यतः पैट्रोलियम पदार्थों से निकलने वाले कृत्रिम रेजिन से बनाया जाता है। रेजिन में अमोनिया एवं बेंजीन को मिलाकर प्लास्टिक के एकलक (मोनोमर) बनाए जाते हैं। इसमें कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, क्लोरीन, सल्फर, और फ्लुओरिन के अणु होते हैं। सैकड़ों वर्षों तक अपघटित न होने के अलावा भी प्लास्टिक अनेक अन्य प्रभाव छोड़ता है, जो मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं। उदाहरण स्वरूप पाइपों, खिड़कियों और दरवाजों के निर्माण में प्रयुक्त पी.वी.सी। प्लास्टिक विनाइलक्लोराइड के बहुलकीकरण सें बनाया जाता है। यह रसायन मस्तिष्क एवं यकृत में कैंसर पैदा कर सकता है। मशीनों की पैकिंग बनाने के लिए अत्यंत कठोर पॉलीकार्बोनेट प्लास्टिक फॉस्जीन बिसफीनॉल यौगिकों के बहुलीकरण से प्राप्त किए जाते हैं। इनमें एक अवयव फॉस्जीन अत्यंत विषैली व दमघोटू गैस है। फार्मेल्डीहाइड अनेक प्रकार के प्लास्टिक के निर्माण में प्रयुक्त होता है। यह रसायन त्वचा पर दाने उत्पन्न कर सकता है। कई दिनों तक इसके संपर्क में बने रहने से दमा तथा साँस संबंधी बीमारियां हो सकती हैं। प्लास्टिक में लचीलापन पैदा करने के लिए प्लास्टिक-साइजर वर्ग के कार्बनिक यौगिक मिलाए जाते हैं। थैलट, एसीसेट, इस्टर तथा कई प्रकार के पॉलिथीलीन ग्लाइकोल यौगिक कैंसरकारी होते हैं। प्लास्टिक में मिले हुए ये जहरीले पदार्थ प्लास्टिक के निर्माण के समय प्रयोग किए जाते हैं। तैयार (ठोस) प्लास्टिक के बर्तनों में यदि लंबे समय तक खाद्य सामग्री रखी रहे या शरीर की त्वचा लंबे समय तक प्लास्टिक के संपर्क में रहे तो प्लास्टिक के जहरीले रसायनों का असर हो सकता है। इसी प्रकार जो प्लास्टिक कचरे में फेंक दिया जाता है, उसका कचरे में लंबे समय तक पड़ा रहना वातावरण को नुकसान पहुँचता है। प्लास्टिक कचरे को ठिकाने लगाने के लिए अब तक तीन उपाय अपनाए जाते रहे हैं। आमतौर पर प्लास्टिक के न सड़ने की प्रवृति को देखते हुए इसे गड्ढों में भर दिया जाता है। दूसरे उपाय के रूप में इसे जलाया जाता है, लेकिन यह तरीका बहुत प्रदूषणकारी है। प्लास्टिक जलाने से आमतौर पर जो विषाक्त रसायन हमारे पर्यावरण में पहुँचते हैं उनमें कार्बन डाइऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड नाइट्रोजन ऑक्साइड्स, सल्फर डाइऑक्साइड, वाष्पशील कार्बनिक रसायन, और ठोस अपशिष्ट के रूप में पॉलीसाइक्लिक कार्बनिक पदार्थ प्रमुख हैं। इसके अलावा कुछ भारी धातुएँ और अत्यधिक विषाक्त रसायन फुरान्स तथा डाइऑक्सिन्स भी हवा में पहुँचते हैं। यूँ यह प्लास्टिक की किस्म पर निर्भर करता है कि उसके जलने से क्या-कुछ बनता है। उदाहरणार्थ, पॉलिस्टीरीन प्लास्टिक को जलाने पर क्लोरो-फ्लोरो कार्बन और स्टीरीन गैस निकलते हैं। क्लोरो-फ्लोरो कार्बन वायुमंडल की ओजोन परत के लिए नुकसानदायक हैं। स्टीरीन गैस हमारे स्वास्थ्य के लिए बेहद नुकसानदेह है। इसी प्रकार पॉलिविनायल क्लोराइड को जलाने पर क्लोरीन, नायलान और पॉलियूरेथीन को जलाने पर नाइट्रिक ऑक्साइड जैसी विषाक्त गैसें निकलती हैं।

प्लास्टिक पुनःचक्रण की शुरूआत सर्वप्रथम सन् 1970 में कैलीफोर्निया की एक फर्म ने की थी। इस फर्म ने प्लास्टिक की छीलन और दूध की प्लास्टिक बोतलों से नालियों के लिए टाइल्स तैयार किए थे। पुनर्चक्रण का मतलब प्लास्टिक अपशिष्ट से पुनः प्लास्टिक प्राप्त करके प्लास्टिक की नई चीजें बनाना है।

प्लास्टिक के निपटान का तीसरा और सर्वाधिक चर्चित तरीका प्लास्टिक का पुनर्चक्रण (रीसाइकलिंग) है। प्लास्टिक पुनर्चक्रण की शुरूआत सर्वप्रथम सन् 1970 में कैलीफोर्निया की एक फर्म ने की थी। इस फर्म ने प्लास्टिक की छीलन और दूध की प्लास्टिक बोतलों से नालियों के लिए टाइल्स तैयार किए थे। पुनर्चक्रण का मतलब प्लास्टिक अपशिष्ट से पुनः प्लास्टिक प्राप्त करके प्लास्टिक की नई चीजें बनाना है। जैसा कि सर्वविदित है प्लास्टिक से बने पदार्थों का सूक्ष्मजीवी अपघटन नहीं होता है। वैश्विक स्तर पर ऐसे प्रयास किए जा रहे हैं कि प्लास्टिक के कचरे का पुनर्चक्रण किया जाए ताकि हम प्रतिवर्ष उस 80 लाख मीट्रिक टन प्लास्टिक कचरे पर अंकुश लगा सकें जो इस वक़्त महासागरों में पहुँचकर उन्हें प्रदूषित कर रहा है। समस्या सिर्फ यह है कि धातुओं और काँच के पुनर्चक्रण की तरह प्लास्टिक के पुनर्चक्रण में बहुत सी समस्याओं से गुजरना पड़ता है और आर्थिक लाभ भी काफी कम होता है। प्लास्टिक के पुनर्चक्रण के लिए सर्वप्रथम उसे गरम करके पिघलाना पड़ता है। प्लास्टिक में घुलनशीलता बहुत कम होती है जिसका कारण इनकी बड़ी पॉलीमर शृंखलाओं का उच्च आणविक भार है। सही ढंग से मिश्रित होने के लिए अक्सर प्लास्टिक की संरचना का समान होना आवश्यक है। जब विभिन्न किस्मों के प्लास्टिक को एक साथ पिघलाया जाता है तो वे तेल और पानी की तरह चरणबद्ध ढंग से पानी और तेल की तरह तहों के रूप में विभाजित हो जाते हैं। इस वजह से पुनर्चक्रण से प्राप्त होने वाले प्लास्टिक में संरचनात्मक कमजोरी पाई जाती है। फलस्वरूप, ऐसे पुनर्चक्रित पॉलीमर मिश्रण केवल कुछ ही वस्तुओं को बनाने के काम आते हैं। प्लास्टिक के पुनर्चक्रण में कुछ समस्याएँ मूल प्लास्टिक में रंगों, पूरक पदार्थों (फिलर्स) और अन्य दूसरे रसायनों का बढ़ता उपयोग है। पुनर्चक्रित पॉलीमर के चिपचिपे होने के कारण आमतौर पर पूरक पदार्थों को हटाने में खर्चा भी अधिक आता है। शीतल पेय के डिब्बों और प्लास्टिक की थैलियों में रसायनों के कम इस्तेमाल के कारण अक्सर इनका

बाजार की प्रतिस्पर्धा के चलते उत्पादकों पर सस्ते प्लास्टिक उत्पाद बनाने का दबाव बना रहता है। सामान सस्ता करने के लिए उन्हें सस्ते कच्चे माल की जरूरत पड़ती है। फिलहाल सस्ता हुआ प्लास्टिक यही कर रहा है।

प्रयोग पुनर्चक्रण के लिए अधिक किया जाता है। यूँ जैविक रूप से अपघटित होने वाले (बायोडिग्रेडेबल) प्लास्टिक के उपयोग से इस समस्या से निजात पाई जा सकती है और इस दिशा में सघन प्रयास किए जाने चाहिए। प्लास्टिक पदार्थों के पुनर्चक्रण की दर को बढ़ाने के लिए जरूरी है कि उन्हें बनाते समय उनमें ऐसे रसायन न मिलाए जाएँ जो इस प्रक्रिया को जटिल बनाते हैं।

प्लास्टिक पुनर्चक्रण (रिसाइक्लिंग) उद्योग पर सस्ते कच्चे तेल की मार पड़ने लगी है। नया प्लास्टिक ज्यादा सस्ता हो चुका है। जर्मनी प्लास्टिक पुनर्चक्रण के मामले में आदर्श माना जाता है लेकिन सस्ता कच्चा तेल अब मुश्किल खड़ी कर रहा है। कच्चे तेल की सफाई के दौरान ही प्लास्टिक और मोम जैसे उत्पाद भी मिलते हैं। यही वजह है कि सस्ते दाम की वजह से नया प्लास्टिक बनाना ज्यादा किफायती रहता है। फलस्वरूप, प्लास्टिक का पुनर्चक्रण तुलनात्मक रूप से महँगा हो गया है। जर्मनी में प्लास्टिक का पुनर्चक्रण करने वाली कंपनियाँ दबाव महसूस करने लगी हैं। महँगे होने के कारण पुनर्चक्रित (रिसाइकिल्ड) प्लास्टिक की मांग कम हो रही हैं। फेडरेशन ऑफ द जर्मन वेस्ट, वाटर एंड रॉ मैटेरियल्स मैनेजमेंट इंडस्ट्री के अध्यक्ष पेटर कुर्थ के मुताबिक हालात गंभीर है। पुनर्चक्रण से जुड़ी कंपनियों को बहुत कम ग्राहक मिल रहे हैं। यूरोप में बेल्जियम, आयरलैंड और जर्मनी प्लास्टिक पुनर्चक्रण में अग्रणी माने जाते हैं। इन देशों की सरकारें रिसाइक्लिंग उद्योग की मदद करती है। जर्मनी में कुल प्लास्टिक उत्पादन का 36 फीसदी हिस्सा पुनर्चक्रित होना अनिवार्य है। अब सरकार इस सीमा को बढ़ाकर 72 फीसदी करना चाहती है। पेटर कुर्थ इसे पर्यावरण और रिसाइक्लिंग उद्योग के लिए जरूरी मान रहे हैं। बाजार की प्रतिस्पर्धा के चलते उत्पादकों पर सस्ते प्लास्टिक उत्पाद बनाने का दबाव बना रहता है। सामान सस्ता करने के लिए उन्हें सस्ते कच्चे माल की जरूरत पड़ती है। फिलहाल सस्ता हुआ प्लास्टिक यही कर रहा है लेकिन पर्यावरण के लिए इसके नतीजे घातक होंगे। दुनिया के ज्यादातर देशों में कचरे का सही प्रबंधन न होने की वजह से प्लास्टिक जमीन, नदी, झीलों और महासागरों का दम घोंट रहा है। एलन मैकआर्थर फाउंडेशन की रिपोर्ट में कहा गया है कि प्लास्टिक के निपटारे के लिए क्रांतिकारी कदम तुरंत उठाए जाने चाहिए। अगर ऐसा नहीं किया गया तो 35 साल बाद महासागरों में मछलियों से ज्यादा प्लास्टिक होगा। रिपोर्ट के मुताबिक हर साल कम से कम 80 करोड़ टन प्लास्टिक महासागरों में जा रहा है, यानि हर मिनट करीब एक ट्रक प्लास्टिक महासागरों में पहुँच रहा है। पिछले वर्ष आठ जून, 2017 को संपूर्ण विश्व में 'विश्व महासागर दिवस' मनाया गया। विश्व महासागर दिवस मनाने का प्रमुख कारण विश्व में महासागरों के महत्व और उनकी वजह से आने वाली चुनौतियों के बारे में विश्व में जागरूकता पैदा करना है। इसके अलावा महासागर से जुड़े पहलुओं जैसे-खाद्य सुरक्षा, जैव-विविधता, पारिस्थितिक संतुलन, सामुद्रिक संसाधनों के अंधाधुंध उपयोग, जलवायु परिवर्तन आदि पर प्रकाश डालना है। हर साल विश्व महासागर दिवस में पूरे विश्व में महासागर से जुड़े विषयों में विभिन्न प्रकार के आयोजन किए जाते हैं, जो महासागर के सकारात्मक और नकारात्मक पहलुओं के प्रति जागरूकता पैदा करने में मुख्य भूमिका निभाते हैं।

वर्ष 2017 में इस दिवस का मुख्य विषय 'हमारे महासागर हमारे भविष्य' था। इस दिवस का उद्देश्य विश्व में महासागरों की महत्वपूर्ण भूमिका के प्रति लोगों को जागरूक करना था। वर्ष 1992 में रियो डी जेनेरियो में हुए पृथ्वी सम्मेलन में इस दिवस को मनाने की घोषणा हुई थी। दिसंबर, 2008 में संयुक्त राष्ट्र महासभा ने प्रतिवर्ष 8 जून को 'विश्व महासागर दिवस' मनाए जाने की आधिकारिक घोषणा की। प्रथम 'विश्व महासागर दिवस' 8 जून, 2009 को मनाया गया था। सन् 2016 में 'विश्व महासागर दिवस' का मुख्य विषय 'स्वस्थ महासागर, स्वस्थ ग्रह' था। उस दौरान विश्व भर में इस विषय को लेकर जो कार्यक्रम आयोजित किये गए थे, उनका लक्ष्य दुनिया के महासागरों में प्लास्टिक प्रदूषण पर अंकुश लगाना था। इन कार्यक्रमों में दुनिया में सतत विकास के लक्ष्य को हासिल करने में महासागरों की भूमिका को रेखांकित किया गया है। द अमेरिकन एसोसिएशन फॉर द एडवांसमेंट ऑफ साइंस के जर्नल 'साइंस एडवांसज' के 19 जुलाई 2017 अंक में छपे एक शोध सार के अनुसार जार्जिया यूनिवर्सिटी के एक शोध ने खुलासा किया है कि बीते 65 सालों में मानव ने तकरीब 83000 लाख मीट्रिक टन प्लास्टिक का उत्पादन किया है। इस बीच वैश्विक स्तर पर प्लास्टिक का उत्पादन कई गुणा बढ़ गया है। सन् 1950 में प्लास्टिक का उत्पादन समूची दुनिया में तकरीब 20 लाख मीट्रिक टन था, जो 2016 में बढ़ कर लगभग 3350 लाख मीट्रिक टन हो गया। इसमें से 63000 लाख मीट्रिक टन प्लास्टिक का कचरे के रूप में ढेर लग चुका है। कचरे की इस बड़ी मात्रा के केवल नौ प्रतिशत को ही अब तक रिसाइकिल किया जा सका है। बारह प्रतिशत प्लास्टिक कचरा जला कर नष्ट किया जा चुका है। एक अनुमान के अनुसार प्लास्टिक कचरे का 79 प्रतिशत हिस्सा कचरा भराव क्षेत्रों में पड़ा रहता है। इस कचरे का एक बड़ा हिस्सा नालों से नदियों में होते हुए महासागरों में पहुंचता

है। 'साइंस एडवांसेज' जर्नल की रिपोर्ट के अनुसार कचरे की बढ़ोतरी की यही रफ्तार रही तो सन् 2050 में 120000 लाख मीट्रिक टन कचरा पड़ा नजर आयेगा। आज का प्लास्टिक कचरा सैकड़ों-हजारों साल तक हमारे जीवन और पर्यावरण से खिलवाड़ करता रहेगा। सन् 2010 तक तकरीब 80 लाख मीट्रिक टन प्लास्टिक कचरा महासागरों में मिल चुका था।

एक अध्ययन के अनुसार सन् 2050 तक आर्कटिक महासागर में मछलियाँ कम और प्लास्टिक की मात्रा ज्यादा होगी। एक रिपोर्ट के अनुसार यदि समय रहते ठोस कदम न उठाए गए तो सन् 2050 तक महासागरों में 8950 लाख मीट्रिक टन कचरा प्लास्टिक कचरा होगा जबकि इनमें मौजूद मछलियों का अनुमानित भार 8950 लाख मीट्रिक टन होगा। विभिन्न धाराओं से आनेवाले छोटे-बड़े टुकड़े महासागरों में लगातार जमा होते जा रहे हैं। आर्कटिक के बहते जल में तकरीबन 100 से 1200 टन प्लास्टिक कचरा हो सकता है। सबसे अधिक मात्रा में प्लास्टिक ग्रीनलैंड के पास समुद्र में पाया गया है। प्लास्टिक के टुकड़े मछलियों के शरीर में भी पाये गये हैं। अन्य महासागरों में यथा हिंद महासागर, प्रशांत महासागर, अटलांटिक महासागर, अरब सागर और बंगाल की खाड़ी आदि में भी इस तरह के अध्ययन की बेहद जरूरत है। हो सकता है कि इनमें प्रदूषण की मात्रा और अधिक हो। वैज्ञानिकों के अनुसार विश्व का सबसे बड़ा महासागर प्रशांत जल्द ही प्लास्टिक महासागर में तब्दील हो सकता है। इसकी तलछटी में प्लास्टिक कचरे का ढ़ेर जमा होता जा रहा है जिससे कई समुद्री जीवों के आवास के लिए खतरा उत्पन्न हो गया है। समुद्री जीव इसे खाने के बाद मौत के मुँह में तेजी से समा रहे हैं। यही हाल दूसरे महासागरों का भी है, जहां मनुष्य का हस्तक्षेप बढा है, वहाँ के प्राकृतिक जीवों पर खतरा भी मंडराने लगा है। विशेषज्ञों का कहना है कि कई चेतावनियों के बावजूद लोग प्रशांत महासागर में कूड़ा-करकट डालना जारी रखे हैं। इससे यह महासागर कूड़े के ढेर में तब्दील होता जा रहा है और पानी में गंदगी फैल रही है। अमेरिकी संस्था अल्गेलिता मेरीन रिसर्च फाउंडेशन के अनुसंधान निदेशक मार्क्स एरिकसन ने कहा कि प्रशांत महासागर में प्लास्टिक और अन्य तरह का कचरा डाले जाने से यह अपने वास्तविक स्वरूप को खो रहा है। यदि यह सिलसिला रुका नहीं तो प्रशांत महासागर प्लास्टिक महासागर के रूप में अपनी पहचान बना लेगा। यह स्थिति न केवल समुद्री जीवों, बल्कि मनुष्यों के लिए भी धातक होगी। अमेरिकी वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि प्रशांत महासागर में प्लास्टिक का समुद्री कचराधर तैयार हो गया है। यह कचर्राघर हवाई से जापान तक फैलता जा रहा है। 'द इंडिपेंडेंट' ने एरिकसन के हवाले से लिखा है कि प्लास्टिक का यह कचराघर क्षेत्रफल के हिसाब से अमेरिका से दुगना बड़ा हो सकता है। प्रशांत महासागर में प्लास्टिक के इस समुद्री कचराघर को 1997 में लास एंजिलिस से हवाई तक हुई नौका दौड़ के दौरान खोजा गया था। यह समुद्री कचराधर वास्तव में दो जुड़े हुए क्षेत्र हैं। ये हवाई द्वीप के दोनों ओर स्थित हैं। ये पूर्वी व पश्चिमी प्रशांत कूड़ा पट्टी के रूप में जाने जाते हैं। इनका करीब पांचवां हिस्सा जहाजों और तेल संयंत्रों से फेंका गया कूड़ा है, जबकि बाकी का कचरा जमीन से इसमें डाला गया है। पिछले 15 साल से इस पर नजर रखे अमेरिकी समुद्र विज्ञानी चार्ल्स जे मूर (Charles J. Moore) और कर्टिस एबिसमेयर (Curtis Ebbesmeyer) के अनुसार यह सुरसा के मुंह की तरह बढ़ता ही जा रहा है। हवाई विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डेविड कार्ल के अनुसार महासागरों में प्लास्टिक के कचराधरों के आकार और व्यवहार का पता लगाने के लिए और अधिक शोध की जरूरत है। उन्होंने कहा कि अल्गेलिता मरीन रिसर्च फाउंडेशन (Algalita Marine Research Foundation) की खोज पर शक करने का कोई कारण नहीं है। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के अनुसार प्लास्टिक के कचरे से हर साल दस लाख से अधिक समुद्री जीवों की मौत होती है। मृत पाए जाने वाले समुद्री जीवों के पेट में सिगरेट लाइटर और टूथब्रश पाए जाते हैं, क्योंकि समुद्र में डाले जाने वाले प्लास्टिक के इन अपशिष्ट पदार्थों को समुद्री जीव गलती से भोजन समझकर खा जाते हैं।

यहाँ यह तथ्य उल्लेखनीय है कि प्लास्टिक कचरा महासागरों ने तो पैदा किया नहीं है, इसके जनक तो हम हैं। इसलिए बेहद जरूरी है कि हम गंभीरता से प्लास्टिक रहित दुनिया के बारे में विचार करें; इसके उत्पादन पर अंकुश लगायें और निस्तारण की तात्कालिक उचित व्यवस्था करें। समुद्र का प्रदूषण हमारी धरती के प्रदूषण का ही एक हिस्सा है। यहाँ यह तथ्य उल्लेखनीय है कि पृथ्वी के लिए जमीनी प्रदूषण से समुद्री प्रदूषण कहीं अधिक खतरनाक साबित हो सकता है। इसे रोक पाना तभी संभव है जबकि धरती का प्रदूषण कम करने में हमें कामयाबी मिले। धरती को प्रदूषण मुक्त किये बिना यह असंभव है। समुद्र का प्रदूषण असलियत में हमारी जीवनशैली का ही नतीजा है। चिंता की बात है कि दुनिया के अधिकांश देशों में प्लास्टिक पर पाबंदी महज एक दिखावा है। ऐसे देश इसके दुष्परिणामों से परिचित नहीं है, यह कहना गलत होगा। इस जटिल समस्या के निदान के लिए दुनिया के सभी देशों को समय रहते ठोस कदम उठाने होंगे। आशा है कि इस वर्ष भारत में आयोजित विश्व पर्यावरण दिवस-2018 के दौरान सभी ऐसे उपायों पर विस्तार से चर्चा की जाएगी जो प्लास्टिक प्रदूषण की मार से धरती को निजात दिलाने में अहम् भूमिका निभायेंगे।

subshah.surendra@gmail.com

विकास और पर्यावरण का क़दमताल

ज़ाहिद खान

वैज्ञानिक दृष्टि से संपन्न लेखक ज़ाहिद खान प्रोग्रेसिव राइटिंग के लिए खासे चर्चित हैं। उनका लेखन चाहे विज्ञान संचार के लिए लिखा गया हो या मानव सभ्यता के विकास के लिए, दोनों ही सूरत में वे वैज्ञानिकता का सूत्र थामे रहते हैं। देशभर के पत्र और पत्रिकाओं में नियमित रूप से आप लेख, समीक्षा, कहानी और स्तम्भ लिखते रहे हैं। 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में कुछ वर्षों से आपके लेख प्रकाशित हो रहे हैं। ज़ाहिद शिवपुरी में रहते हैं।

पर्यावरण की सुरक्षा और लोगों के कल्याण के लिए एकत्रित पैसे को दीगर कामों में लगाए जाने से अपनी नाराज़गी जताते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने हाल ही में सरकार से साफ लहजे में कहा, ''कार्यपालिका हमें मूर्ख बना रही है।'' न्यायमूर्ति मदन बी लोकुर और न्यायमूर्ति दीपक गुप्ता की पीठ ने वायु प्रदूषण और पर्यावरण संरक्षण से जुड़े मामलों की सुनवाई के दौरान स्पष्ट तौर पर सरकार की कड़ी आलोचना करते हुए कहा कि कैम्पा फंड का पैसा पर्यावरण संरक्षण और जनउद्देश्य में खर्च होना था, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। अदालत ने कार्यपालिका पर यकीन किया। कमेटियां बनाईं, उन्हें शक्तियां दीं, फंड एकत्रित हुआ, लेकिन अधिकारी कुछ करना ही नहीं चाहते। पैसा दूसरे मद में खर्च हो रहा है। जब इस मामले में अदालत कुछ आदेश या दिशा-निर्देश देती है, तो कहा जाता है कि न्यायपालिका सीमा लांघ रही है और अतिसक्रियता दिखा रही है। शीर्ष अदालत की यह नाराजगी वाजिब भी है। एक तो हमारी कार्यपालिका संविधान और नियम-कानून के मुताबिक अपनी जिम्मेदारियों का ठीक ढंग से निर्वहन नहीं करती, तो दूसरी ओर जब अदालत, उसे उसकी जिम्मेदारियों से अवगत कराती है, तो न्यायपालिका पर तंज कसा जाता है कि वह सीमा लांघ रही है और अति सक्रियता दिखा रही है। जबकि ऐसी कोई बात नहीं। न्यायपालिका वही कार्य करती है, जिसकी जिम्मेदारी उसे संविधान ने सौंपी है।

सर्वोच्च न्यायालय साल 1985 में दायर की गई पर्यावरणविद एमसी मेहता की जनहित याचिका की सुनवाई कर रहा था। सुनवाई के दौरान जब बहस आगे बढ़ी, तब पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय की ओर से अतिरिक्त सालिसीटर जनरल एएनएस नाडकर्णी ने सीधे जवाब देने के बजाय पीठ से कहा कि अदालत को केन्द्र सरकार को बताना चाहिए कि इस कोष का कैसे और कहाँ इस्तेमाल होना चाहिए और इसका उपयोग कहाँ नहीं किया जा सकता? इस दलील पर पीठ और नाराज हुई और कहा कि यह अदालत का काम नहीं है। अदालत कोई पुलिस नहीं है, जो कि यह कहकर पकड़े कि तुमने नियम तोड़ा है। स्थिति बहुत निराशाजनक है। एक तरफ अदालत से कहा जाता है कि वह बताए कि क्या किया जाए और जब अदालत कुछ कहती है, तो कहा जाता है कि अदालत सीमा लांघ रही है। पीठ ने पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के सचिव को स्पश्ट निर्देश दिया कि इस साल 31 मार्च की स्थिति के मुताबिक सभी राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों का आंकड़ा एकत्र करें, जिसमें यह बताया जाए कि इस मद में कुल कितना फंड एकत्रित हुआ है और उसका किस मद में कैसे उपयोग किया जाएगा। अदालत खास तौर से ओडिशा और मेघालय राज्य के हलफनामे देखकर नाराज थी। ओडिशा ने अपने हलफनामे में कहा था कि कैम्पा फंड में एकत्रित रकम से सड़कें बनीं, इन्फ्रास्ट्रक्चर तैयार हुआ, एक करोड़ बस स्टैंड पर खर्च हुए। कालेज की साइंस लैब बनी। इस पर अदालत ने नाराजगी जताते हुए कहा कि ये काम तो सरकार और स्थानीय निकायों का है,

जिसके लिए अलग से बजट होता है। पर्यावरण संरक्षण और जन कल्याण का पैसा सरकार इस पर कैसे खर्च कर सकती है ? बहरहाल मामले में अब अगली सुनवाई 9 मई को होगी, जिसमें राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों के हलफनामों से मालूम चलेगा कि कैंपा फंड का कितना सदुपयोग हुआ और कितना दुरुपयोग ?

विकास कार्यों के नाम पर देश भर में हरे पेड़ों का कटान लगातार किया जाता है। इसकी प्रतिपूर्ति में सर्वोच्च न्यायालय की ओर से दो दशक पहले, साल 2009 में 'कंपन्सेटरी अफॉरेस्टेशन फंड्स मैनेजमेंट एंड प्लानिंग अथहॉरिटी (कैम्पा) फंड बनाया था। यह फंड पर्यावरण संरक्षण के लिए इकट्ठा किया जाता है। कैंपा फंड का यह पैसा केंद्र के पास जमा होता है। केंद्र, समय-समय पर यह राशि मांग के अनुरूप राज्य सरकार को जारी करता रहता है। इस धनराशि के खर्च के लिए कोई ठोस गाइड लाइन न होने की वजह से बीते सालों में इस फंड का बड़े पैमाने पर गैर-वानिकी कार्यों में उपयोग किया जाता रहा है। जबकि 'कैंपा' नियमावली के मुताबिक इस निधि की 80 फीसदी रकम का इस्तेमाल वनों एवं वन्य प्राणियों के विकास में होगा, तो बाकी 20 फीसदी रकम का इस्तेमाल वनोत्तर क्षेत्रों में किया जा सकता है। यानी कैंपा की धनराशि प्रमुख रूप से क्षतिपूरक वनीकरण के लिए खर्च की जाना चाहिए, लेकिन ज्यादातर राज्य इसे अलग मद में खर्च कर रहे हैं। देश की विभिन्न राज्य सरकारों पर 'कैंपा फंड' के दुरुपयोग के गंभीर आरोप लगते रहे हैं। कैंपा कोष के दुरुपयोग की कहानी नियम विरुद्ध निर्माण कार्यों से लेकर आलीशान वाहनों की खरीद, इको टूरिज्म एक्टिविटी, संरक्षित वनों को काटने, वनविभाग के संविदाकर्मियों को वेतन बांटने और आला अधिकारियों के सैर सपाटे तक फैली हुई है। मसलन उत्तराखंड में 32 करोड़ रुपये से 'राजाजी नेशनल पार्क टाइगर रिजर्व' में अलग-अलग स्थानों पर दीवारें बना दी गईं। जबकि दीवार बनाने के लिए कैंपा के मद का प्रावधान नहीं है। यही नहीं कैंपा धनराशि से भवन निर्माण और गेस्ट हाउस बना दिए गए। इसके साथ ही भवनों की मरम्मत करा दी गई। कमोबेश यही कहानी प्राकृतिक तौर पर समृद्ध बाकी राज्यों की भी है। कुछ राज्यों ने कैंपा धनराशि से वाहनों की खरीदारी कर ली, तो कुछ ने वन्य जीवों से बचाव के लिए फेंसिंग और दीवार बनवा डालीं। इसके अलावा भी राज्य के दूसरे विभिन्न प्रोजेक्टों में 'कैंपा' से धनराशि का प्रावधान कर दिया गया। जाहिर है कि राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों ने सीधे-सीधे 'कैंपा' के नियमों को दरकिनार करके अपने यहां नियम विरुद्ध कार्यवाहियां कीं। विडम्बना की बात तो यह है कि कई मामलों में 'कैंपा' कोष की निगरानी के लिए केंद्रीय स्तर पर गठित की गई 'सेंट्रल एंपावर्मेंट कमेटी' को भी इसके दुरुपयोग की पूरी जानकारी थी, बावजूद इसके उसने दोषियों पर कोई कार्यवाही नहीं की। कैग की रिपोर्टों में भी एक बार नहीं बल्कि कई मर्तबा कैंपा कोष के दुरुपयोग की बातें उजागर हुईं हैं, लेकिन संबंधित सरकारें दोषियों पर कोई कार्यवाही नहीं करतीं। दोषियों पर यदि समय रहते कार्यवाहियाँ होतीं, तो कैंपा कोष का आइंदा दुरुपयोग नहीं होता।

कैंपा यानी 'वनीकरण क्षतिपूर्ति कोष प्रबंधन और नियोजन प्राधिकरण' का जब गठन हुआ, तो उस वक्त इस कोश में करीब 11 हजार 700 करोड़ रुपए थे। फिलहाल इस तरह के सभी कोषों में करीब एक लाख करोड़ रुपए जमा हैं। अफसोस ! इतनी बड़ी रकम का सही तरह से इस्तेमाल नहीं हो पा रहा है।

कैंपा यानी 'वनीकरण क्षतिपूर्ति कोष प्रबंधन और नियोजन प्राधिकरण' का जब गठन हुआ, तो उस वक्त इस कोष में करीब 11 हजार 700 करोड़ रुपए थे। फिलहाल इस तरह के सभी कोषों में करीब एक लाख करोड़ रुपए जमा हैं। अफसोस ! इतनी बड़ी रकम का सही तरह से इस्तेमाल नहीं हो पा रहा है। अदालतों के दिशा-निर्देश और तमाम आदेशों के बाद भी कैंपा फंड के दुरुपयोग होने की घटनाओं में कोई कमी नहीं आई है। कैंपा कोष की निगरानी के लिए गठित 'सेंट्रल एंपावर्मेंट कमेटी' ने भी अपनी जिम्मेदारियों का सही तरह से निर्वहन नहीं किया। सच बात तो यह है कि जिन राज्यों में कैंपा कोष के इस्तेमाल में गड़बड़ियाँ पाई गईं, उन राज्यों में भी अब तक कैंपा के कार्यों की जांच, ग्राउंड लेबल पर नहीं हो पाई है। केवल कागजों में ही इंटरनल आडिट किया गया है। ऐसे में अगर ग्राउंड लेबल पर कार्यों की जांच की जाएगी, तो पूरी तस्वीर उभरकर सामने आ पाएगी। किस तरह से कैंपा के बजट को खपाया जा रहा है या फिर उसका ठीक से इस्तेमाल किया जा रहा है? कैंपा कोश के गठन के बाद से एक नहीं, बल्कि कई राज्यों में कैंपा के कार्यों में गड़बडियां सामने आ चुकी हैं। उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उत्तराखंड समेत अन्य राज्यों में थर्ड पार्टी जाँच में खामियाँ सामने आई थीं। केन्द्र सरकार यदि अब भी कैंपा कोष का दुरुपयोग रोकना चाहती है और पर्यावरण के प्रति वाकई गंभीर है, तो उसे किसी स्वतंत्र एजेंसी से इस तरह के मामलों की जाँच करानी चाहिए। जाँच के बाद जो भी दोषी निकले, उसे सजा के अलावा उससे सारे धन की वसूली की जाए। वनों की गुणवत्ता का संरक्षण केवल वनवासियों के लिये ही नहीं है, बल्कि पर्यावरण की व्यापक आवश्यकता है। आज के वक्त की पहली जरूरत है। कैम्पा कोष का जिस मकसद के लिए गठन किया गया था, यदि उस मकसद के लिए ये रकम सही तरह से इस्तेमाल होगी, तो निश्चित तौर पर विकास और पर्यावरण एक साथ कदमताल मिलाएंगे। सर्वोच्च न्यायालय की चिंताएँ भी यही हैं।

jahidk.khan@gmail.com

विकास का विकल्प हरित ऊर्जा

शुभ्रता मिश्रा

पिछले कुछ दशकों से भूमण्डलीय तापन और जलवायु परिवर्तन जैसे पर्यावरणीय मुद्दों के खुलकर सामने आने के बाद से पूरी दुनिया के लोगों की पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरुकता बढ़ी है। हाल ही में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूएनईपी) की एक रिपोर्ट में चेतावनी दी गई है कि वर्तमान गति से यदि परम्परागत ऊर्जास्त्रोतों का उपयोग किया जाता रहा, तो सम्भव है 2050 तक ग्रीन हाउस गैसों का प्रसार बढ़कर दोगुना हो जाये। अतः रिपोर्ट में यह सलाह दी गयी है कि ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए परम्परागत साधनों पर निर्भरता कम करते हुए हरित ऊर्जा विकल्पों को अपनाने की जरुरत है।

हरित ऊर्जा क्या है?

हरित ऊर्जा, ऊर्जा का ऐसा स्थायीस्रोत है जो पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य दोनों के लिए अत्यधिक हानिकारक नहीं है। वास्तव में हरित ऊर्जा प्राकृतिक अक्षय ऊर्जा स्रोतों जैसे सूर्य, पवन, जल, भूगर्भ औरपादपों से उत्पन्न की जाती है। वर्तमान में विश्व की लगातार बढ़ रही जनसंख्या के कारण ईंधन की लागत बढ़ रही है और इसके समानांतर परम्परागत ईंधन भंडारों में भी निरंतर कमी होती जा रही है। ऐसे में सभी लोग ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत खोजने में जुट गए हैं। भविष्य की अपार संभावनाओं से युक्त हरित ऊर्जा आज की आवश्यकता बनती जा रही है। पिछले तीन दशकों में, हरित ऊर्जा के क्षेत्र में द्रुतगति से अनुसंधान और विकास कार्य हुए हैं। नित नवीन हरित प्रौद्योगिकियां सामने आती जा रही हैं,जो लोगों की कोयला, तेल और प्राकृतिक गैस जैसे पारम्परिक ऊर्जा स्त्रोतों पर निर्भरता कम कर सकने के लिए काफी हैं। अब यह बात धीरे-धीरे स्पष्ट होती जा रही है कि जीवाश्म ईंधन की तुलना में हरित ऊर्जा स्त्रोत बेहतर विकल्प साबित हो सकते हैं।

हरित ऊर्जा विकल्प कौन कौन से हैं?

गैर प्रदूषणकारी हरित ऊर्जा के अनेक विकल्पों पर तीव्र गति से अनुसंधान चल रहे हैं। मुख्य रूप से हरित ऊर्जा के निम्नलिखित विकल्पों की ओर ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है।

सौर ऊर्जा - सीधे सूर्य से प्राप्त सौर ऊर्जा हरित ऊर्जा का सर्वाधिक प्रचलित विकल्प है। पिछले कई वर्षों से सौर उर्जा का प्रयोग कई तरह से किया जा रहा है। इनमें सौर ऊर्जा से बिजली बनाने की दिशा में बहुत ही महत्वपूर्ण उपलब्धियां हासिल हुई हैं। इसके अलावा प्रायः लोग प्राकृतिक प्रकाश के तौर पर तो इसका इस्तेमाल करते ही हैं, साथ ही आजकल सोलर गीजरों और सोलर कुकरों का प्रयोग भी घरों में बहुत बढ़ता जा रहा है। इन सबके के लिए सौरऊर्जा को एकीकृत फोटोवोल्टाइक एवं ऊर्जा संयंत्र के निर्माण के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। दुनिया के प्रमुख फोटोवोल्टाइक पावर संयंत्रों में नेलिस सौर ऊर्जा संयंत्र, गीरासोल सौर ऊर्जा विद्युत संयंत्र तथा वाल्डपोलेंज सौर उद्यान शामिल हैं। भारत में भी सौर ऊर्जा हेतु विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन सरकारी स्तर पर ऊर्जा मंत्रालय द्वारा

वनस्पति शास्त्र में शोध करने वाली डॉ. शुभ्रता मिश्रा युवा विज्ञान लेखिका हैं आपने इंडिया साइंस वॉयर, विज्ञान प्रसार में अब तक पैंतीस विज्ञान कथा और लेख लिखे हैं। आपके विज्ञान लेख आकाशवाणी से प्रसारित होते रहे हैं। अंग्रेजी में पंद्रह तथा हिन्दी में पांच पुस्तकें लिखीं जिनमें 'भारतीय अंटार्कटिक संभारतंत्र' काफी चर्चित हुई है। इस किताब को राष्ट्रीय अंटार्कटिक एवं समुद्री अनुसंधान केन्द्र, पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा प्रकाशित किया गया है। कई पुरस्कारों से सम्मानित डॉ. शुभ्रता गोवा में रहती हैं।

किया जा रहा है। भारत की सधन जनसंख्या और उच्च सौर आतपन के कारण यहां सौर ऊर्जा एक आदर्श ऊर्जा स्रोत बन सकती है। पिछले कुछ सालों से भारत का सौर ऊर्जा के क्षेत्र में बहुत उम्दा प्रदर्शन रहा है। अब यह दुनिया के दस-शीर्ष सौर ऊर्जा उत्पादकों में शामिल हो चुका है। सौर ऊर्जा के क्षेत्र में अपार संभावनाओं को देखते हुए अब विदेशी कंपनियां भी धीरे-धीरे भारत की ओर आकृष्ट हो रही हैं।

पवन ऊर्जा को एक अतिविकसित, कम लागत वाला और प्रमाणित अक्षय ऊर्जा प्रौद्योगिकी के रूप में मान्यता प्राप्त है। तटवर्ती पवन ऊर्जा प्रौद्योगिकी व्यापक स्तर पर भारत में निरंतर वृद्धि के साथ क्रियान्वित हो रही है और इसके दोहन की अपार संभावनाएँ हैं।

पवन ऊर्जा – धरती के खुले हवादार स्थानों पर पवन चक्कियों द्वारा हवा के माध्यम से उत्पन्न की जाने वाली पवन उर्जा भी हरित ऊर्जा का अच्छा विकल्प बनकर उभर रही है। इससे भी बिजली बनाई जाती है। ऐसा माना जाता है कि दुनिया में सकल पवन ऊर्जा के उपयोग में चीन, अमेरिका और जर्मनी के बाद भारत का चौथा स्थान है। भारत की पवन ऊर्जा के उत्पादन में कुल वैश्विक भागीदारी 5.8 प्रतिशत है। भारत सरकार ने 1998 में चेन्नई में एक स्वायत्त अनुसंधान और विकास संस्थान पवन ऊर्जा प्रौद्योगिकी केन्द्र (सी-वैट) की स्थापना की थी। यह संस्थान देश में संपूर्ण पवन ऊर्जा क्षेत्र में सेवाएँ प्रदान करता है और भावी अनुसंधान द्वारा सभी प्रकार की कठिनाईयों के समाधान निकालने और सुधार लाने का प्रयास करता है। इस केंद्र का क्याथार में एक पवन टरबाइन परीक्षण केन्द्र (डब्ल्यूटीटीएस) है, जो डेनमार्क की तकनीकी तथा आंशिक रूप से वित्तीय सहायता से स्थापित किया गया है। यह केंद्र देश में पवन विद्युत के विकास, पवन ऊर्जा के उपयोग की गति को बढ़ावा देने और पवन विद्युत क्षेत्र में तकनीकी विकास के लिए कार्य कर रहा है। इसके अलावा देश में समुद्री तट के इलाकों में पवन ऊर्जा के लिए विशेष आर्थिक क्षेत्र तैयार किए जा रहे हैं। इसके लिए राष्ट्रीय ऑफशोर पवन ऊर्जा नीति के तहत पवन ऊर्जा के प्लांट ऑफशोर यानी समुद्री सीमा से संलग्न 200 नॉटिकल्स मील के भीतर समुद्र में लगाए जाते हैं। पवन ऊर्जा को एक अतिविकसित, कम लागत वाला और प्रमाणित अक्षय ऊर्जा प्रौद्योगिकी के रूप में मान्यता प्राप्त है। तटवर्ती पवन ऊर्जा प्रौद्योगिकी व्यापक स्तर पर भारत में निरंतर वृद्धि के साथ क्रियान्वित हो रही है और इसके दोहन की अपार संभावनाएँ हैं। नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय के अनुसार, वर्ष 2016-17 में पवन ऊर्जा में 5400 मेगावॉट की वृद्धि हुई है। वर्तमान में भारत में पवन ऊर्जा से विद्युत उत्पादन 9500 मेगावॉट है। भारत की संस्थापित पवन ऊर्जा क्षमता (25,088 मेगावॉट) देश की कुल वैद्युत संस्थापित क्षमता का 8.7 प्रतिशत है।भारत में आयातित कोयले से पैदा होने वाली बिजली के मुकाबले पवन ऊर्जा सस्ती पड़ती है।

जल ऊर्जा – जल सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है और जलऊर्जा ज्वार-भाटा, तरंगों, जलताप और जलविद्युत के रूप में मिलती है। जल ऊर्जा भी हरित ऊर्जा का एक प्रकार है। जल ऊर्जा अत्यधिक मात्रा में ऊर्जा पैदा करने के लिए उच्च वर्षा के स्तर पर निर्भर करती है। जल चक्र से उत्पन्न बिजली को जलविद्युत कहते हैं। विकसित देशों के विकास में जलविद्युत का योगदान कुल आवश्यकता का 50 प्रतिशत से अधिक रहता है जबकि भारत में यह 15 प्रतिशत के लगभग है। विश्व के सर्वाधिक जलविद्युत उत्पादक देशों में चीन और ब्राजील सबसे ऊपर आते हैं। भारत में जलविद्युत पनबिजली के नाम से अधिक जानी जाती है। यहाँ इसका शुभारम्भ ब्रिटिशकाल के दौरान 1897 ई. में दार्जलिंग के निकट सिद्रापोंग अथवा सिद्राबाद में हुआ माना जाता है। भारत की जलविद्युत परियोजनाओं में उत्तराखण्ड की भागीरथी नदी की लगभग 2400 मेगावाट की टिहरी परियोजना, महाराष्ट्र की कोयना नदी की लगभग 1956 मेगावाट की कोयना परियोजना, आंध्रप्रदेश और तेलंगाना में कृष्णा नदी की लगभग 1670 मेगावाट की श्रीशैलम परियोजना और हिमाचल प्रदेश में सतलज नदी की लगभग 1500 मेगावाट की नाथपा झाकड़ी परियोजना प्रमुख हैं। इसके अलावा पिछले साल अक्टूबर 2016 हिमाचल प्रदेश के मंडी में तीन जलविद्युत परियोजनाओं-कोलडैम जलविद्युत परियोजना, पार्वती-III जलविद्युत परियोजना और रामपुर जलविद्युत परियोजनाएं राष्ट्र को समर्पित की गई थीं। इन तीनों जलविद्युत परियोजनाओं की संयुक्त स्थापित क्षमता 1732 मेगावॉट है। भारत ने अजरबैजान, भूटान, मलेशिया, नेपाल, ताइवान एवं न्यूजीलैंड में भी जलविद्युत परियोजनाएं स्थापित करने में सहायता की है।

भू-तापीय ऊर्जा - पृथ्वी के गर्भ में उपस्थित खनिजों के रेडियोधर्मी क्षय और भूसतह द्वारा अवशोषित सौर ऊर्जा के कारण भारी मात्रा में तापीय ऊर्जा बनती है, जिसे भूतापीय ऊर्जा कहते हैं। इस भूतापीय ऊर्जा में मनुष्य की ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने की असीम क्षमता है लेकिन इसके दोहन के उपाय अपेक्षाकृत अधिक मंहगे हैं। सामान्यतौर पर भूतापीय ऊर्जा का उपयोग भी उद्योगों व धरेलु आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बिजली उत्पादन में ही किया जाता है। सबसे पहला भूतापीय विद्युत केंद्र इटली में स्थापित किया गया था। वर्तमान में जापान,

ऐसा माना जा रहा है कि लकड़ी के बुरादे, कचरे और जलाए जा सकने योग्य कृषि अपशिष्ट पेट्रोलियम आधारित ईंधन स्रोतों की तुलना में बहुत कम ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन करते हैं।

इंडोनेशिया, न्यूजीलैंड, इटली, मेक्सिको, फिलीपींस, चीन, रूस, टर्की सहित दुनिया के 24 देशों में भू तापीय विद्युत पैदा कर रहे हैं और इसकी लगभग 78 देशों में आपूर्ति की जा रही है। सर्वाधिक 25% भू तापीय विद्युत आइसलैंड में उत्पन्न की जाती है। दुनियाभर में भू-तापीय संयंत्रों में 10 गीगावाट बिजली उत्पन्न करने की क्षमता है। विश्व में भू-तापीय ऊर्जा संयंत्र का सबसे बड़ा समूह अमरीका के कैलिफोर्निया में है। विश्व के कुछ देश जैसे अल साल्वाडोर, केन्या, फिलीपींस, आइसलैंड और कोस्टा रिका में विद्युत उत्पादन में 15 प्रतिशत से अधिक भू-तापीय स्रोतों का उपयोग किया जाता है ।ज्वालामुखी सक्रिय क्षेत्रों में भूतापीय ऊर्जा एक महत्वपूर्ण ऊर्जा स्रोत है। हालांकि ज्वालामुखी से निकलने वाली ऊर्जा का दोहन और उपयोग करने की तकनीकी अभी कहीं भी विकसित नहीं हुई है। पिछले कई दशकों से भारत में भी भारतीय भू वैज्ञानिक सर्वेक्षण के वैज्ञानिक भूतापीय ऊर्जा के शोध व अध्ययन में लगे हुए हैं, जिसके अन्तर्गत यहाँ लगभग 340 तापीय झरनों की पहचान की जा चुकी है। 2015 में यह निर्धारित हुआ कि छत्तीसगढ़ में बलरामपुर जिले के तातापानी में देश का पहला भूतापीय विद्युत केंद्र स्थापित होगा, तब से इस परियोजना के तहत कार्य जारी है।

हरित ऊर्जा के अन्य विकल्प : बायोमास, जैव ईंधन और लैंडफिल गैस को भी हरितऊर्जा के अन्तर्गत रखा गया है। ऐसा माना जा रहा है कि लकड़ी के बुरादे, कचरे और जलाए जा सकने योग्य कृषि अपशिष्ट पेट्रोलियम आधारित ईंधन स्रोतों की तुलना में बहुत कम ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन करते हैं। अतः इनका उपयोग ऊर्जा स्रोत की तरह किया जा सकता है। इन सामग्रियों को बायोमास या जैवभार के नाम से जाना जाता है, क्योंकि इनमें उपस्थित ऊर्जा सूर्य से संग्रहीत होती है। ऐसा भी देखा जाता है कि कभी-कभी यह बायोमास कार्बनिक सामग्री जलाए जाने के बजाय ईंधन में परिवर्तित करके भी इस्तेमाल किया जा सकता है। तब इसे जैव ईंधन की संज्ञा दी जाती है। इसके उल्लेखनीय उदाहरणों में इथेनहल और बायोडीजल शामिल हैं। आजकल लैंडफिल गैस (एलएफजी) को भी हरित ऊर्जा विकल्प की तरह देखा जाने लगा है। वास्तव में एलएफजी लैंडफिल क्षेत्र में भरे गए कचरे के कार्बनिक पदार्थों के अपघटन से बना एक प्राकृतिक उप-उत्पाद है। एलएफजी लगभग 50 प्रतिशत मीथेन, 50 प्रतिशत कार्बन डाइऑक्साइड और गैर-मीथेन कार्बनिक यौगिकों की अत्यंत सूक्ष्म मात्रा से बनी होती है। आजकल बढ़ रहे लैंडफिल कचरे को देखते हुए वैज्ञानिक और पर्यावरणविद इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि उत्पन्न एलएफजी को ऐसे ही वायुमण्डल में छोड़ देने के बजाय उसको एकत्रित और रूपांतरित करके एक ऊर्जा स्रोत के रूप में उपयोग किया जा सकता है। यह पाया गया है कि एलएफजी लैंडफिल से आने वाली दुर्गंधों और अन्य खतरनाक उत्सर्जनों को कम करने में सहायता करती हैऔर यह मीथेन को वातावरण में जाने से रोकने और स्थानीय धुंध और वैश्विक जलवायु परिवर्तन में योगदान करने में भी सहायक है। एलएफजी का उपयोग विद्युत जनरेटर के ईंधन के रूप में किया जा सकता है।

हरित ऊर्जा विकल्प बेहतर क्यों हैं?

हरित ऊर्जा के उपर्युक्त विकल्पों और उनकी अक्षय व पुनःनिर्मित क्षमताओं ने परम्परागत ऊर्जा स्रोतों से स्वयं को बेहतर साबित कहलाने के लिए बाध्य किया है। हम सभी जानते हैं कि बरसों से दुनिया जिन ऊर्जा स्त्रोतों को जीवाश्म ईंधन के रुप में उपयोग करती आ रही है, वे एक सीमित संसाधन हैं। जहाँ एक ओर उनके विकास में लाखों साल लग जाते हैं वहीं उनके अत्यधिक दोहन से समय के साथ साथ वे कम होते जाएंगे। एक और सबसे बड़ी बात यह है कि हरित ऊर्जा विकल्पों का जीवाश्म ईंधन की तुलना में पर्यावरण पर बहुत कम दुष्प्रभाव पड़ता है, क्योंकि इनसे ग्रीनहाउस गैसें नहीं निकलती हैं। इसके अलावा जीवाश्म ईंधन प्राप्त करने के लिएप्रायः पृथ्वी पर उन स्थानों में खनन अथवा ड्रिलिंग करने की आवश्यकता होती है जो पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील होते हैं। हरित ऊर्जा विकल्प पूर्णतया निशुल्क तथा प्रचुरता में सरलता से उपलब्ध हैं। इन पर जीवाश्मीय ईंधनों, जैसे तेल, गैस, या नाभिक ईंधनों- जैसे यूरेनियम आदि की तरह किसी भी देश या वाणिज्यिक प्रतिष्ठान का एकाधिकार नहीं होता है। अतः इनकी आपूर्ति भी निर्बाध होती रहती है और हरित ऊर्जा मूल्यप्रभावी बन जाती है। इस तरह हरित ऊर्जा विकल्प विशुद्धरुप से सरल, सर्वव्याप्त और पूरी दुनिया में आसानी से उपलब्ध हैं, जिसमें ग्रामीण और सुदूर वे इलाके भी शामिल हैं, जहां अभी तक बिजली भी नहीं पहुंच पाई है।

हरित ऊर्जा विकल्प लोकप्रिय क्यों नहीं हैं?

हरित ऊर्जा विकल्पों की प्रौद्योगिकियों में निरंतर विकास हो रहा है, फिर भी वे लोकप्रिय नहीं बन पा रहे हैं। सौर पैनलों, पवन टर्बाइनों और हरित ऊर्जा के अन्य स्रोतों का उपयोग मुख्य रूप से बिजली का उत्पादन करने में किया जा रहा है। परन्तु इन सभी विकल्पों में एक उभय-निष्ठतथ्य जो उभरकर आता है, वो इनका अधिक खर्चीला होना है, क्योंकि इनके उत्पादन में भारी निवेश की आवश्यकता होती है।

लोगों में हरित ऊर्जा को लेकर जागरुकता का अभाव है, जिससे उपलब्ध क्षमता के बावजूद भी हरित ऊर्जा का दोहन काफी कम है। लोग इन विकल्पों के साथ विश्वास नहीं बैठा पा रहे हैं क्योंकि बरसों से परम्परागत ऊर्जाओं के उपयोग करने की आदत पड़ गई है और उनसे भावनात्मक जुड़ाव हो गया है। चूँकि हरित ऊर्जा की मात्रा में अचानक परिवर्तन हो सकते हैं, अतः यह भी संभव है कि मांग या आवश्यकता के समय इनकी उपलब्धता उत्पादन को प्रभावित करे। अतः इनकी अविश्वसनीय आपूर्ति के कारण हरित ऊर्जा की व्यवहारिक असुविधा को लेकर आशंका बनी रहती है। जैसा कि किसी भी नई तकनीक की शुरुआत के साथ होता है, वही हरित ऊर्जा विकल्पों के साथ भी हो रहा है। इनकी वास्तविक क्षमताओं और नवीकरणीय ऊर्जा के स्रोत के तौर पर इनकी विश्वसनीयता को लेकर प्रश्नचिन्ह लगना स्वाभाविक है।

हरित ऊर्जा विकल्पों हेतु भारत कितना तैयार है?

इस समय भारत ने नवीकरणीय ऊर्जा के नाम पर हरित ऊर्जा विकल्पों के सार्थक दोहन के लिए एक विस्तृत रणनीति तैयार की हुई है। इसके तहत 2022 तक 175 गीगावॉट क्षमता स्थापित करने का लक्ष्य रखा गया है, जो वर्तमान के 46 गीगावॉट का चार गुना है। भारतीय वैज्ञानिक, नीति निर्माता और पर्यावरणविद् भी हरित ऊर्जा की नई-नई तकनीकों और मॉडलों को तैयार करने में व्यस्त हैं। सौर, पवन और जल विद्युत प्रणालियों में विश्वसनीय और लागत प्रभावी प्रौद्योगिकी प्राप्त करने और सम्बद्ध सुविधाओं एवं क्षमताओं को विकसित और सुदृढ़ बनाने के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोगों का आदान-प्रदान किया जा रहा है। भारत की फोटोवोल्टिक क्षमता को बढ़ाने के लिए सोलर पैनल निर्माण उद्योग को 210 अरब रुपए (3.1 अरब अमेरिकी डालर) की सरकारी सहायता देने की योजना है इस योजना के तहत भारत 2030 तक कुल ऊर्जा का ४० फीसदी हरित ऊर्जा से पैदा करने के लिए प्रतिबद्ध है।

हरित ऊर्जा ही भविष्य का एकमात्र विकल्प क्यों है?

पिछले कुछ दशकों में विश्व की निरंतर बढ़ रही औसत जनसंख्या, आधुनिक तकनीकी विकास और विद्युतीकरण की बढ़ती दर के कारण विश्व स्तर पर ऊर्जा की मांग भी उतनी ही तेजी से बढ़ी है। पर्यावरण विशेषज्ञों का विश्वास है कि इस मांग को हरित ऊर्जा के विभिन्न विकल्पों के माध्यम से पूरा किया जा सकता है। लोगों के बेहतर स्वास्थ्य, कोयले जैसे पारम्परिक ईंधन के बढ़ते खर्च पर नियंत्रण, विश्वव्यापी उष्णता तथा अम्लीय वर्षा और कार्बन - डाईआक्साइड के उत्सर्जन को कम करके पर्यावरण की सुरक्षा के लिए अब हरित ऊर्जा ही भविष्य का एकमात्र विकल्प रह गया है।

हरित ऊर्जा के भविष्य को कैसे सुनिश्चित करना होगा?

विश्व में सौर ऊर्जा से लेकर समुद्र तटीय क्षेत्रों में पवन और जल ऊर्जा के विस्तार के साथ साथ भूतापीय ऊर्जा से विद्युत उत्पादन द्वारा दुनिया की अधिकतम बिजली की जरूरत को पूरा किया जा सकता है। हरित ऊर्जा अपनाने से विश्व पर्यावरण की गुणवत्ता में सुधार से वायु प्रदूषण को कम किया जा सकता है। इसके लिए हरित ऊर्जा के बड़े पैमाने पर उपयोग के साथ-साथ इसकी भंडारण क्षमता के सशक्तीकरण की भी आवश्यकता है। हरित ऊर्जा को लोगों द्वारा स्वेच्छा से अपनाने के लिए इससे भावनात्मक और सामाजिक तौर पर जुड़ना होगा। इनकी विश्वसनीयता को बढ़ावा मिलने के लिए हरित ऊर्जा संसाधनों पर अधिक नियंत्रण और बेहतर प्रदर्शन सुनिश्चित करना होगा।

shubhrataravi@gmail.com

'हिन्दी में विज्ञान लेखन : भूत, वर्तमान एवं भविष्य'
लेखक : डॉ. शिवगोपाल मिश्र
प्रकाशक : आईसेक्ट विश्वविद्यालय
मूल्य : 200 रुपये

हिन्दी में विज्ञान लेखन की जटिलताओं पर जब हम विचार करते हैं तो पहले-पहल यह ध्यान आता है कि हिन्दी में विज्ञान की किताबें बहुत कम उपलब्ध हैं। अंग्रेजी में तो फिर भी विज्ञान लेखन होता रहा है। इससे मूल कारण पर विचार करते हुये हम पाते हैं कि अब भी हिन्दी में विज्ञान शब्दावली के विकास होने की आवश्यकता बनी हुई है। विज्ञान को समझने-समझाने के लिए हिन्दी विज्ञान लेखन के क्रमिक विकास का विहंगावलोकन आवश्यक है। वस्तुतः ऐसी ही सोच के कारण हिन्दी विज्ञान लेखन के भूत, वर्तमान तथा भविष्य विषयक यह पुस्तक गम्भीरता से विचार करके रोचक तरीके से लिखी गई है।

13 सितम्बर 1931 में जन्में इस किताब के लेखक शिवगोपाल मिश्र एम.एस-सी, डी.फिल, साहित्य रत्न में शिक्षित डॉ. मिश्र विज्ञान परिषद् प्रयाग इलाहाबाद के प्रधानमंत्री हैं। वे शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान के निदेशक भी रहे। उन्होंने कई विज्ञान कोश व ग्रंथों की रचना की जिसमें हिन्दी में 26 तथा अंग्रेजी में 11 पुस्तकों सहित 5 पाठ्यपुस्तकें, नौ साहित्यिक पुस्तकें, महाकवि निराला पर तीन पुस्तकें उल्लेखनीय हैं। आपको आत्माराम पुरस्कार, भारत भूषण सम्मान आदि से विभूषित किया गया है।

पर्यावरण सुरक्षा और मृदा तापमान

डॉ. दिनेश मणि

डॉ. दिनेश मणि विगत तीन दशक से विज्ञान लेखन कर रहे हैं। विज्ञान के लोकप्रियकरण में उनका उल्लेखनीय योगदान है। अब तक आपकी हिन्दी में 28 और अंग्रेजी में 6 पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। 35 शोध पत्र और लगभग 700 विज्ञान आलेख प्रकाशित हुए हैं। आपके निर्देशन में 12 शोध छात्रों को डॉक्टरेट की उपाधि मिल चुकी है। विज्ञान की महत्वपूर्ण मासिक पत्रिका 'विज्ञान' के संपादक रहे दिनेश मणि इलाहाबाद में रहते हैं।

प्रकृति में सौर उर्जा के रूप में अपार सम्पदा हमारे पास उपलब्ध है जिसका उपयोग मृदा पर्यावरण को सुरक्षित रखने मे किया जा सकता है। सूर्य उष्मा का मुख्य स्रोत है। सूर्य से प्राप्त ऊर्जा की मात्रा पर ही मृदा तापमान निर्भर करता है। पृथ्वी के अन्दर से संचालन एवं रासायनिक तथा जैविक प्रक्रमों द्वारा प्राप्त उष्मा बहुत ही थोड़ी होती है तथा मृदा तापमान पर इसका कोई विशेष प्रभाव नही पड़ता है। सूर्य से निकली हुई उष्मा की मात्रा तथा वायुमंडल द्वारा उष्मा के अवशोषण पर सूर्य से विकिरण द्वारा मृदा में उष्मा की मात्रा निर्भर करती है। वायुमंडल में उपस्थित धूल के कण तथा जल वाष्प सूर्य से निकले विकिरण को कम कर देती है। सूर्य की लम्बवत् पड़ने वाली किरणें पृथ्वी को 2 कैलोरी/से.मी.2/मिनट की ऊर्जा प्रदान करती हैं। लगभग 42 प्रतिशत ऊर्जा पृथ्वी के वायुमंडल के वाह्य अंतरिक्ष को परावर्तित हो जाती हैं और लगभग 33 प्रतिशत ऊर्जा को पानी, कार्बन डाईऑक्साइड तथा ओजोन अवशोषित कर लेते हैं। अतः सूर्य से कुल प्रदत्त ऊर्जा का सिर्फ 25 प्रतिशत भाग (0.5 कैलोरी/से.मी.2/मिनट) ही धरती पर प्रकाश के रूप में आता है। आने वाली ऊर्जा की वास्तविक मात्रा बादल, मौसम तथा धूप की अवस्था पर निर्भर करती है। साथ ही धरती पर आई हुई कुल ऊर्जा मृदा-उष्मा नहीं बन पाती है क्योंकि इसका कुछ भाग परावर्तित हो जाता है और कुछ भाग विकिरण उष्मा तरंगों के रूप में चला जाता है।

सूर्य से आई हुई तथा विसरित हुई कुल ऊर्जा में से कुछ भाग विकिरण के रूप में पृथ्वी पर पड़ता है। इस विकिरण का कुछ भाग सतह से परावर्तित हो जाता है तथा कुछ भाग उष्मा तरंगों में समाप्त हो जाता है। अवशेष को प्राप्य विकिरण कहा जाता है। यह वह सुलभ ऊर्जा है जिससे मृदा और वायु गरम होते हैं तथा पानी का वाष्पीकरण होता है। वाष्पीकरण से मृदा का तापमान घटता है क्योंकि वाष्पीकरण के लिए आवश्यक उष्मा मृदा वायुमंडल से आती है। शुष्क मृदा में सारी ऊर्जा मृदा की उष्मा बढ़ाने के काम आती है। प्रकाश-ऊर्जा मृदा तथा पौधों की पत्तियों की सतह पर पहुँचकर उष्मा ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है। मृदा तथा पौधों में वायु की अपेक्षा प्रकाश ऊर्जा अवशोषण की अधिक क्षमता होती है। मृदा पृष्ठ से चालित ऊर्जा द्वारा अवमृदा संस्तरों में उष्मा पहुँचती है। परन्तु

निचली सतहों में उष्मा का परिवर्तन ऊपरी सतह की तुलना में बहुत ही कम होता है। दोपहर के समय ऊपरी सतह की मृदा निचली सतहों से कहीं अधिक गरम होती है तथा सतह का तापमान वायु से 0 डिग्री सेन्टीग्रेड से 10 डिग्री सेन्टीग्रेड तक अधिक पाया जाता है।

उष्मा का चालन मृदा की तरह किसी संरंध्री पदार्थ की अपेक्षा किसी ठोस पदार्थ में शीघ्र होता है। इसलिए गीली मृदा, सूखी मृदा की अपेक्षा, अच्छी उष्मा-चालक होती है ताप बढ़ाने के लिए जल को शुष्क मृदा की अपेक्षा लगभग पाँच गुनी अधिक उष्मा की आवश्यकता होती है। इसलिए शुष्क मृदा की अपेक्षा नम मृदा को ताप बढ़ाने के लिए अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है। इसीलिए गहरे रंग की मृदा, हल्के रंग की मृदा की अपेक्षा अधिक ठंडी होती है। इसके बावजूद भी गहरे रंग की मृदा में उष्मा शोषण-क्षमता कहीं अधिक पाई जाती है। मृदा में पानी मिलने से या उसके आभासी घनत्व को बढ़ने से या रंध्राकाश घटाने से उष्मा-चालन की गति तीव्र हो जाती है। उदाहरण के लिए एक मोटे गठन वाली मृदा बारीक गठन वाली मृदा की अपेक्षा शीध्र गरम हो जाती है, नम मृदा में उष्मा चालन शीघ्र होता है, परन्तु पानी की विशिष्ट उष्मा अधिक होने के कारण इसका प्रभाव शुष्क मृदा की अपेक्षा देर से पड़ता है। जल, वायु या अन्य पोषकों की तरह ही मृदा तापमान भी पादप वृद्धि का एक महत्वपूर्ण कारक है। बीज, पादप, जड़ें, और सूक्ष्मजीव मृदा में जीवित रहते हैं तथा इनके जीवन-प्रक्रम सीधे मृदा तापमान से प्रभावित होते हैं। प्रायः हम मृदा तापमान के पादप वृद्धि पर पड़ने वाले प्रभाव के महत्व को नहीं पहचानते हैं क्योंकि यह वायु-तापमान के समान नहीं होता है और वायु-तापमान को ही पादप वृद्धि पर पड़ने वाले प्रभाव के लिए उत्तरदायी मानते है। लेकिन कुछ मामलों में बड़ा अंतर पाया जाता है। बसंत में, वायुमंडल गरम रहने के कुछ समय बाद भी एक भीगी मृदा काफी समय तक ठंडी बनी रह सकती है। नाइट्रीकरण की क्रिया अवरूद्ध हो जाती है तथा जड़ों द्वारा जल के उद्ग्रहण की गति कम तापमान से मंद पड़ जाती है। पादप वृद्धि तथा सूक्ष्मजीवों की सक्रियता को प्रभावित करने वाले कारकों में से मृदा तथा एक मुख्य कारक है। बीजों का खेत में अंकुरित होना, पत्तों का बढ़ना, फूलना और फलना आदि मृदा ताप पर निर्भर होते हैं। कार्बनिक पदार्थ के विच्छेदन एवं कार्बनिक नाइट्रोजन के खनिजीकरण की दर ताप में वृद्धि होने से अधिक होती है। अन्य सूक्ष्म जैविक प्रक्रमों की गति भी ताप पर निर्भर होती है। मृदा का ताप मुख्य रूप से सूर्य से प्राप्त विकिरण ऊर्जा की मात्रा के ऊपर निर्भर करता है। सूर्य की प्रखर किरणें उसके चारों ओर आती हैं। सूर्य की विकीर्ण ऊर्जा का कुछ भाग पृथ्वी की ओर आता है। सूर्य की किरणें पृथ्वी पर पहुँचने से पहले इस वायुमंडल में होकर गुजरती है। पृथ्वी पर पहुँचने वाली उष्मा की मात्रा पर वायुमंडल का प्रभाव पड़ता है। वायुमंडल में धूल के कणों तथा जल वाष्प का अधिक होने पर पृथ्वी पर पहुँचने वाली उष्मा में कमी आती है, क्योंकि जल वाष्प उष्मा का अधिकांश भाग शोषित कर लेती है, व जलवाष्प बादल का रूप धारण कर लेती है तो पृथ्वी तथा सूर्य के बीच यह पर्दे का काम करती हैं और सूर्य से आने वाली उष्मा का कुछ भाग शोषित करती है और कुछ भाग लौटा देती है। बादलों का परदा पृथ्वी की गर्मी को बाहर जाने से भी रोकता है। अतः ऐसी दशा में पृथ्वी द्वारा विकिरित उष्मा बाहर नहीं जा पाती।

मृदा तापमान का सूक्ष्मजीवी सक्रियता पर उल्लेखनीय प्रभाव पड़ता है। 10 डिग्री से.ग्रे. से नीचे के तापमानों पर यह सक्रियता बहुत कम होती है। लाभकारी मृदाजीवों की अनुकूलतम सक्रियता 18 और 30 डिग्री से.ग्रे. के बीच होती है। नाइट्रोजन यौगिकीकारी जीवाणु गरम और अच्छी तरह जलनिकासी वाली मृदाओं में सर्वोत्तम दशा में सक्रिय होते हैं। 40 डिग्री से.ग्रे. से अधिक ऊपर के तापमानों पर सूक्ष्मजीव निष्क्रिय हो जाते हैं। नाइट्रीकरण तापमान पर निर्भर करता है। इस प्रकार अनुकूलतम तापमान 30 डिग्री से.ग्रे. के आसपास होता है। 30 डिग्री से.ग्रे. से अधिक तापमान पर निचले तापमानों की अपेक्षा अविनिमेय रूप सें पोटेशियम निर्मुक्त्त होता है। न्यून तापमानों पर पादपजड़ों द्वारा पोटैशियम का ग्रहण रूक जाता है। तापमान के साथ जल की मुक्त ऊर्जा बढ़ती है, अर्थात एक क्रियात्मक सीमा तक जैसे-जैसे मृदा गरम होती है, पौधों को अधिक जल सुलभ हो जाता है। म्लानि बिन्दु पर मृदा के गरम होने पर अस्थाई रूप सें पौधों में स्फीति (turgidity) लौट आती है।

न्यून तापमानों पर पादप पोषकों की सुलभता घटती है, विशेषकर उन तत्वों की जिनकी सुलभता सूक्ष्मजीवी सक्रियता पर निर्भर करती है। फसलों की जड़ें अत्यधिक तापमानों में कुंठित हो

उष्मा का चालन मृदा की तरह किसी संरंध्री पदार्थ की अपेक्षा किसी ठोस पदार्थ में शीघ्र होता है। इसलिए गीली मृदा, सूखी मृदा की अपेक्षा, अच्छी उष्मा-चालक होती है ताप बढ़ाने के लिए जल को शुष्क मृदा की अपेक्षा लगभग पाँच गुनी अधिक उष्मा की आवश्यकता होती है। इसलिए शुष्क मृदा की अपेक्षा नम मृदा को ताप बढ़ाने के लिए अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

जाती हैं और उनमें शाखायें बहुत कम फूटती हैं। फलतः पादप पोषकों और जल को अवशोषित करने की उनकी क्षमता घट जाती है। पौधों की मृदा तापमान आवश्यकता में फसलों की जातियों के अनुसार बदलती जाती है। यह उल्लेखनीय है कि वृद्धि की अवस्था के साथ-साथ भी पौधों की मृदा तापमान की अवस्थायें बदलती हैं। तापमान के बढ़ने से प्ररोह/जड़ अनुपात बढ़ जाता है, क्योंकि तापमान के बढ़ते ही जड़ें पोषक और जल अधिक प्राप्त करने में सक्षम हो जाती है। मृदा से वायुमंडल की ओर होने वाला विकिरण लगातार होता रहता है। मृदा तापमान जितना अधिक होता है, यह विकिरण उतना ही अधिक होता है। वायु से होने वाले विकिरण की अपेक्षा निर्वात स्थिति में से होने वाला विकिरण अधिक होता हैं क्योंकि उत्सर्जित ऊर्जा का कुछ भाग वायुद्वारा अवशोषित हो जाता है। मृदा से होने वाली उष्मा विकिरण की मात्रा, कोहरे, बादल जलवाष्प और पलवार से घट जाती है।

मृदा सौरीकरण एक विशेष पलवार तकनीक है। इस तकनीक में नमी युक्त भूमि को पारदर्शी अत्यन्त पतली प्लास्टिक शीट से गर्म मौसम में ढक कर भूमि के तापमान में वृद्धि कर भूमि का संक्रमण कम किया जाता है। यह तकनीक बहुत पुरानी नहीं है।

यद्यपि मृदा तापमान वृद्धि से विसरित दरें बढ़ती है, तथापि इससें सूक्ष्मजीवी सक्रियता भी बढ़ती है। फलतः मृदा में कार्बन-डाईआक्साइड उत्पन्न होती है। किसी मृदा में ऑक्सीजन के आंशिक दाब पर तापमान वृद्धि से जो प्रभाव पडता है, वह अनुकूल या प्रतिकूल हो सकता हैं। इस सम्बन्ध में वातन पर पलवार का प्रभाव विचारणीय है। पलवार से वर्षा की बूदों के हानिकारक प्रभाव से रक्षा होती है और मृदा की वपन-योग्यता सुरक्षित रहती है। इसके वातन भी अनुकूल रहता है। दूसरी ओर इससे मृदा में अधिक नमी बनी रहती है और प्रभावी वायु क्षमता सीमित हो जाती हैं। गर्मी और बसन्त के दौरान वातन की अधिक आवश्यकता होती है। इससे मृदा ठंडी बनी रहती है, फलतः विसरण दरें घट जाती हैं। पलवार डालने से विसरण पर पड़ने वाला प्रभाव प्रतिकूल होगा या अनुकूल यह बात अलग-अलग स्थितियों पर निर्भर करती है, फिर भी परीक्षण से पता चलता है कि इससे सामान्य रूप से मृदा में ऑक्सीजन विसरण घट जाता है।

मृदा तापमान को नियंत्रित करने की हमारी क्षमता सीमित है पर चूँकि तापमान में सापेक्षतः थोड़े परिवर्तन से ही पादप वृद्धि का बड़ा प्रभाव पडता है, इसलिए मृदा तापमान प्रबंध से महत्वपूर्ण परिणाम निकल सकते हैं। हम मूलभूत मृदा तापमान कारकों और कुछ पारिस्थितिक कारकों को सुधार सकते है, यद्यपि किसी क्षेत्र की सामान्य जलवायु पर नियंत्रण हमारी सीमा के बाहर है। नमी की मात्रा और संरचना के परिवर्तनों से, उष्मा चालकता, उष्माधारिता और फलतः उष्मा विसरणशीलता और वस्तुतः मृदा तापमान को बदला जा सकता है। मृदा के पृष्ठ की स्थूलता के समायोजन से उष्मा का अवशोषण तथा विकिरण एवं मृदा से परे उष्मा ऊर्जा चालन को सुधारा जा सकता है। मृदा पृष्ठ पर नमी तनाव स्तर एक महत्वपूर्ण कारक होता है जो वाष्पन या संघनन की दर का निर्धारण करता है। मृदा तापमान को नियंत्रित करने के सबसे प्रभावकारी साधनों में से एक है-पलवार (मल्च) का प्रयोग। इस कार्य के लिए फसल अवशेषों या कागज अथवा प्लास्टिक के पलवारों का सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया है। एक साफ या हरे पारदर्शी पॉलीथीन आवरण के प्रयोग से मृदा तापमान बहुत अधिक बढ़ जाता है, क्योंकि इस तरह मृदा में उष्मा ऊर्जा का प्रवेश तो होता है, लेकिन मृदा से वायुमंडल की ओर होने वाला विकिरण बहुत घट जाता है और वाष्पन भी रूक जाता है।

सामान्य रूप से पलवार द्वारा मृदा तापमान में उतार-चढ़ाव कम कर दिया जाता है, वनस्पति, भूमि पर छाया करती है और प्रकाश संश्लेषण और वाष्पोत्सर्जन की क्रिया के लिए विकिरण ऊर्जा का उपयोग करती है। फलतः मृदा इससे सापेक्षतः ठंडी बनी रहती है। बसंत काल में वपनीय क्यारी को गरम रखने का प्रभावी तरीका है-खेत में मेंडबंदी करना और इन मेंडों में ही बीजों को बोना। इनमें मृदा अधिक तेजी से सूखती है और पृष्ठ में ढलान होने के कारण सूर्य से अधिक विकिरण प्राप्त होता है।

मृदा सौरीकरण एक विशेष पलवार तकनीक है। इस तकनीक में नमी युक्त भूमि को पारदर्शी अत्यन्त पतली प्लास्टिक शीट से गर्म मौसम में ढक कर भूमि के तापमान में वृद्धि कर भूमि का संक्रमण कम किया जाता है। यह तकनीक बहुत पुरानी नहीं है। इसका सर्वप्रथम प्रयोग इजराइल में केतन एवं उनके सहयोगी वैज्ञानिकों ने सत्तर के दशक के प्रारम्भ में हानिकारक रोगजनकों एवं खरपतवार के प्रबन्धन हेतु किया था। यह आर्थिक दृष्टि से उपयुक्त एवं पर्यावरणीय सुरक्षित तकनीक हैं। विश्व के लगभग 100 देशों में इस विधि का उपयोग हो रहा है। विभिन्न स्थानों पर किये गये परिणामों से यह ज्ञात होता है कि ''मृदा सौरीकरण'' द्वारा कीट, खरपतवार, रोग एवं सूत्रकृमि प्रबन्धन से रासायनिक जीवनाशकों का प्रयोग कम किया जा सकता है। इसमें कोई दो मत नहीं है कि कीटनाशकों, फफूँदनाशकों, सूत्रकृमिनाशकों,

चूहानाशकों एवं खरपतवारनाशकों द्वारा पीड़क जीवों का समय पर सस्ते एवं प्रभावी ढंग से नियंत्रित किया जा सकता है लेकिन इनके अवशेषी प्रभाव, प्रतिरोधक क्षमता विकास एवं पर्यावरणीय दुष्प्रभाव के कारण इनका विकल्प चुनना आवश्यक है। मृदा सौरीकरण को पीड़क के प्रबन्धन हेतु उपयोग किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त इस तकनीक से पोषक तत्वों की उपलब्धता तथा सूक्ष्मजीवीय क्रियाओं में भी वृद्धि होने से उपज में वृद्धि होती है। हानिकारक जीवों का नियंत्रण पीड़कनाशकों का उपयोग कम करना, लम्बे समय तक प्रभावशील रहना, अवशेषी प्रभाव नहीं छोड़ना, प्रतिरोधक क्षमता का विकास न होना आदि मृदा सौरीकरण के प्रमुख लाभ है।

अनुसंधानों द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका है कि भूमि के 5 सेमी, गहराई पर पॉलीथिन मल्च करने पर तापमान मे 10 डिग्री से.ग्रे. की वृद्धि होती है। तापमान में यह वृद्धि लगभग सभी नाशीजीवों को हानिकारक क्षमता को कम करती है। मृदा सौरीकरण तकनीक को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है–''वर्ष में अधिक तापमान वाले महीनों (मई-जून) में खाली पड़े खेत को पारदर्शी प्लास्टिक की फिल्म द्वारा सिंचाई उपरांत ढक कर, मृदा के तापमान में 10-12 डिग्री सेंटीग्रेड वृद्धि कर हानिकारक जीव एवं खरपतवारों को नष्ट (नियंत्रित) करना ही मृदा निर्जर्मीकरण अथवा मृदा सौरीकरण कहलाता है। मृदा सौरीकरण एक जल तापीय विधि है। इसमें प्रयुक्त पारदर्शी प्लास्टिक शीट के कारण सूर्य की गर्मी भूमि तक पहुंचती है किन्तु यह वापस नहीं लौट पाती जिससे प्लास्टिक शीट एवं भूमि के बीच हरित गृह प्रभाव द्वारा तापमान में वृद्धि होती है। इस कारण मृदा में पाये जाने वाले हानिकारक रोगजनक, रोगाणु, जीवाणु कीट, सूत्रकृमि एवं खरपतवार की हानि पहुँचाने की क्षमता लगभग समाप्त हो जाती है। मृदा के भौतिक, रासायनिक, जैविक गुणों पर धनात्मक प्रभाव के कारण पौधे की वृद्धि एवं विकास अच्छा होता है अनुसंधानों द्वारा प्राप्त परिणाम से यह ज्ञात हुआ कि प्लास्टिक शीट से भूमि में पलवार (मल्च) करने में बिना पलवार की तुलना में तापमान में 8-12 डिग्री सेंटीग्रेड की वृद्धि होती है।

मृदा सौरीकरण में अच्छी तरह तैयार समतल खेत में सिचाई उपरांत एक पतली पारदर्शी पॉलीथीन शीट से पलवार बिछाकर किनारों पर भली-भांति दबा देते है। जिससे सूर्य की गर्मी भूमि एवं पॉलीथीन के बीच संरक्षित हो जाती है तथा हरित गृह प्रभाव के कारण मृदा सतह एवं 5-10 सेमी, गहराई तक मृदा ताप में 8-12 डिग्री सेंटीग्रेड की वृद्धि हो जाती है। यह प्रक्रिया मई व जून में 6 सप्ताह तक करते है। तापमान वृद्धि के कारण मृदा में उपस्थित हानिकारक पीड़क एवं खरपतवारों के बीज की प्रजनन क्षमता समाप्त हो जाती है और पीड़कों की संख्या नियंत्रित हो जाती है।

मृदा सौरीकरण प्रक्रिया को क्षेत्र का चयन, जलवायु, मिट्टी का प्रकार, मृदा वातावरण में व्याप्त तापमान, खेत की तैयारी, प्लास्टिक शीट का रंग एवं मोटाई, सौरीकरण के समय एवं सौरीकरण के पश्चात् की क्रियाएँ जैसे कारक प्रभावित करते है। इन सभी कारकों का उचित प्रबंधन ही मृदा सौरीकरण को प्रभावी बनाता है। कई वैज्ञानिकों का मत यह भी है कि मृदा सौरीकरण करने के पूर्व मिट्टी में कार्बनिक खाद मिलाने पर मृदा सौरीकरण का प्रभाव बढ़ जाता है।

मृदाजनित रोगों के रोगाणुओं को निष्क्रिय करने में सौरीकरण की समयावधि एवं तापक्रम वृद्धि का सार्थक प्रभाव पाया गया है। अनुसंधान परिणामों से यह विदित होता है कि 2 से 4 सप्ताह तक 37 डिग्री सें.ग्रे. तापमान पर हानिकारक फफूंदों की 90 प्रतिशत संख्या कम हो जाती है। सामान्य तौर पर सौरीकरण करने से 1 से 6 घंटे में 47 डिग्री सें.ग्रे. के दौरान तापमान 35-60 डिग्री से.ग्रे. तक पहुंच जाता है जो कि स्थान, मौसम, मिट्टी का प्रकार, गहराई, पॉलीथिन का रंग व मोटाई एवं समयावधि पर निर्भर करता है। तापक्रम वृद्धि से मिट्टी में उपस्थित जैविक पदार्थ की अपघटन क्रिया तेज हो जाती है। फलस्वरूप मिट्टी से रासायनिक यौगिक उत्सर्जित होते हैं, जो कि सूक्ष्मजीवों के लिये हानिकारक होते है। सौरीकरण से लगभग सभी फसलों के उकठा रोग, जड़ गलन रोग, स्कैब रोग, क्राउन गाल, केन्कर प्रभावी ढंग से नियंत्रित किये जा सकते है।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि हमारे देश में यह तकनीक अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती है क्योंकि देश में अधिकांश भागों में अप्रैल से जून तक खेत खाली रहते है और दिन एवं रात का तापमान अन्य समय की तुलना में अधिक रहता है। इस तकनीक द्वारा उपलब्ध सूर्य ऊर्जा का उपयोग किया जा सकता है। यह तकनीक प्रयोगकर्ता के लिये सुरक्षित है। खरपतवारों, कवको, जीवाणु, तथा सूत्रकृमि पर प्रभावकारी है। इसका प्रभाव तीन फसलों तक रहता है। इस तकनीक का प्रयोग नगदी फसलों ऊंची कीमत वाली फसलों, पुष्पोत्पादन, सब्जी उत्पादन, मसाला और विभिन्न नर्सरियों में करने पर आर्थिक दृष्टि से काफी लाभदायक होगा।

dineshmanidsc@gmail.com

विज्ञान लेख

आर्टिफिशियल इंटेलिजेन्स तकनीक के ख़तरे भी

डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र

डॉ.कृष्ण कुमार मिश्र ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से रसायन विज्ञान में पीएच-डी. की उपाधि प्राप्त की। आप टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान मुंबई के होमी भाभा विज्ञान केन्द्र में रीडर हैं। लोकप्रिय विज्ञान लेखक के रूप में आपकी अपार ख्याति है जोकि हिन्दी में आपके व्यापक लेखन से निर्मित हुई है। आपके 150 से अधिक लेख तथा 15 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हैं। अनेक पुरस्कारों से सम्मानित डॉ.मिश्र मुंबई में निवास करते हैं।

'बुद्धिमत्ता' ही है जिसकी वजह से मनुष्य अन्य जीवों से अलग है। बुद्धिमत्ता ही उसे दूसरे सभी जीवों से श्रेष्ठ बनाती है। मनुष्य के पास मस्तिष्क है जो सोच सकता है। समझ सकता है तथा विचार करके निर्णय ले सकता है। लेकिन हाल के वर्षों में ऐसी मशीनों तथा युक्तियों के निर्माण की ओर तेजी से कदम बढ़ाये जा रहे हैं जिससे मनुष्य को ज्यादा कुछ करने की जरूरत शायद नहीं होगी। दैनिक जीवन के हर काम मशीनें ही करेंगी। इसी क्रम में हम ऐसे मुकाम पर पहुँच गए हैं जहाँ तकनीकी विशेषज्ञों को यह भरोसा हो चला है कि निकट भविष्य में मानव मस्तिष्क के सारे क्रिया-कलाप मशीनी रूप धारण कर लेंगे। इसी विधा को कृत्रिम बुद्धिमत्ता यानी आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) कहा जाता है। इसके बारे में सबसे पहले कम्प्यूटर वैज्ञानिक जॉन मैकार्थी ने बताया था। इसलिए उन्हें इस विधा का प्रतिपादक कहा जा सकता है।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता का आरंभ सन् 1950 के दशक में हुआ था। इसमें कम्प्यूटर और कम्प्यूटर प्रोग्रामों को उन्हीं तर्कों के आधार पर चलाने का प्रयास किया जाता है जिसके आधार पर मानव मस्तिष्क चलता है। इसका एक अनूठा उदाहरण है शतरंज खेलने वाला कम्प्यूटर। यह कम्प्यूटर मानव मस्तिष्क की लगभग हर चाल की काट और अपनी अगली चाल सोचने के लिए प्रोग्राम किया हुआ होता है। यह इतना सफल रहा है कि मई 1997 में आईबीएम का कम्प्यूटर 'डीप ब्लू' विश्व चैंपयन शतरंज खिलाड़ी गैरी कास्पोरोव को हरा चुका है। कहा जाता है कि आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के आने से सबसे बड़ा नुकसान इंसानों को होगा क्योंकि इंसानों की जरूरत ही नहीं होगी। यानी मशीनें स्वयं ही निर्णय लेने लगेंगी। अब अगर उन पर नियंत्रण नहीं किया जा सका तो वे मानव सभ्यता के लिए खतरनाक हो सकती हैं। हाल ही में दिवंगत विश्वप्रसिद्ध भौतिकीविद् प्रो. स्टीफन हॉकिन्स ने बीबीसी को दिए गए एक साक्षात्कार में आगाह करते हुए कहा था कि, ''आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की तकनीकी मानव विनाश की कथा लिख सकती है।" तकनीकी विशेषज्ञ एलॉन

मस्क मानव सभ्यता के लिए आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस को नाभिकीय हथियारों से भी ज्यादा खतरनाक बता चुके हैं।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की तकनीक

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का शाब्दिक अर्थ है कृत्रिम बुद्धिमत्ता। यह एक तरह का सिस्टम विकसित करना है जो कृत्रिम रूप से सोचने, समझने एवं सीखने की क्षमता रखता हो। कृत्रिम बुद्धिमत्ता (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस) का सामान्य अर्थ है कृत्रिम तरीके से विकसित की गई बौद्धिक क्षमता। विज्ञान की उन्नति के साथ-साथ हर एक चीज कृत्रिम तौर पर बनाने के प्रयास हो रहे हैं। इस प्रगति में मानव ने बुद्धिमत्ता के क्षेत्र में भी अपने अनुभव और आकांक्षाओं से कृत्रिम बुद्धिमत्ता विकसित करने का प्रयास किया है। वैज्ञानिकों द्वारा ऐसे कम्प्यूटरों का आविष्कार किया गया है जिनमें जटिल से जटिल कार्य को अल्प समय में करने की क्षमता होती है। आधुनिक कम्प्यूटरीकृत मशीनें किसी लिखे हुए टैक्स्ट यानी पाठ को मानव की तरह पहचान कर पढ़ सकती हैं। ऑटो पायलट मोड पर वायुयान, तथा मशीन द्वारा संचालित किए जा रहे हैं। आधुनिक कम्प्यूटरों में ध्वनियाँ और आवाजों को पहचानने की क्षमता होती है। गौरतलब है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता एक रूप में सीमित है क्योंकि इसमें मशीनी सामर्थ्य इसकी प्रोग्रामिंग पर निर्भर करती है जब कि मानवीय मस्तिष्क में ऐसी कोई सीमा निश्चित नहीं होती है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के अनुप्रयोग

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के जनक जॉन मैकार्थी के अनुसार, "यह इंटेलिजेंस मशीन बनाने की साइंस और इंजीनियरिंग है, विशेष रूप से बुद्धिमान कम्प्यूटर प्रोग्राम बनाने के लिए"। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस ऐसे कम्प्यूटर, कम्प्यूटर कंट्रोल रोबोट, या सॉफ्टवेयर बनाने का एक तरीका है जो समझदारी से सोच सकते हैं, जिस तरह बुद्धिमान इंसान सोचते हैं। इंसानों के मस्तिष्क कैसे सोचते हैं और वे कैसे सीखते हैं, निर्णय लेते हैं और समस्या का समाधान करते समय कैसे काम करते हैं, इस तरह की बातों को सीखकर एआई निपुण होता है। इस शब्द को अकसर मनुष्य की बौद्धिक प्रक्रियाओं के साथ संपन्न होने वाली डेवलपिंग सिस्टम के लिए उपयोग किया जाता है जो इंसानों की विशेषताओं मसलन, तर्क करने की क्षमता, अर्थ की खोज, पिछले अनुभव से सीखना आदि से जुड़ी हैं।

अब तक के आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस तकनीक के विकास की बात करें तो मशीनी दिमाग के लिए शतरंज खेलना, गणितीय प्रमेयों को हल करना, कविताएं लिखना, भीड़-भाड़ जैसी जगहों पर कार ड्राइविंग करना बेहद आसान हो चुका है। सन् 1940 के दशक में डिजिटल कम्प्यूटर के विकास के बाद से यह दिखाया गया है कि कम्प्यूटर को बहुत ही जटिल कार्य को पूरा करने के लिए प्रोग्राम किया जा सकता है-उदाहरण के लिए मैथमैटिकल प्रमेयों के लिए सबूत की खोज करने या शतरंज खेलते समय-उच्च प्रवीणता के लिए। फिर भी कम्प्यूटर प्रोसेसिंग की स्पीड और मेमोरी कैपेसिटी में लगातार प्रगति के बावजूद अभी तक ऐसे प्रोग्राम नहीं आए हैं जो व्यापक डोमेन पर मानव स्वभाव से मेल खा सकें। दूसरी ओर कुछ प्रोग्राम्स ने विशिष्ट टास्क को परफॉर्म करते समय मनुष्य के एक्सपर्ट और प्रोफेशनल लेवल को प्राप्त किया है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस विभिन्न क्षेत्रों में प्रभावशाली भूमिका निभा रही है।

अंतरिक्ष-अंतरिक्ष एजेन्सियों ने अब स्वचालित अंतरिक्षयान भेजना प्रारम्भ कर दिया है। इसमें भी एआई तकनीकी का उपयोग किया जाता है। हमारे सौरमंडल की तरह ही केपलर-90 ऐसा सितारा है जिसके चारों ओर ग्रह चक्कर काटते हैं। इस खोज में गूगल के इंजीनियरों की ओर से आर्टिफिशल इंटेलिजेंस तकनीक की मदद ली गई है। यह उन ग्रहों को खोजने में मदद करती है जिन्हें पहले नहीं खोजा जा सका है।

कम्प्यूटर गेम्स- आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस तकनीकी रणनीति वाले खेलों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं जैसे कि पोकर, टिक-टैक-टौ, शतरंज आदि। जहाँ मशीन अनेक संभावित स्थितियों के बारे में अनुमान लगा सकती है।

स्वाभाविक भाषा प्रसंस्करण - एआई तकनीकी द्वारा ही कम्प्यूटर के साथ बातचीत (संवाद) करना संभव है जो मनुष्य के द्वारा बोली जाने वाली स्वाभाविक भाषा समझता है।

वाक् पहचान-एआई तकनीक द्वारा विकसित कुछ बुद्धिमान प्रणालियाँ सुनने और भाषा को वाक्यों और उसके अर्थ को समझने में सक्षम हैं खास करके उस समय जब मनुष्य उससे संवाद कर रहा होता है। वह भिन्न लहजों, खिचड़ी शब्दों, पृष्ठभूमि के शोर, सर्दी के कारण मनुष्य की आवाज में बदलाव आदि को भी समझ लेती हैं।

हस्तलिपि पहचान (हैंडराइटिंग रिकग्निशन)- एआई तकनीकी की सहायता से विकसित हस्तलेख पहचान सॉफ्टवेयर द्वारा कलम से कागज पर लिखे या स्टाईल्स द्वारा स्क्रीन पर लिखे शब्द पढ़ सकता है। ये सॉफ्टवेयर अक्षरों की आकृतियों को पहचान कर उन्हें संपादन योग्य टैक्स्ट में रूपांतरिक कर सकते हैं।

बुद्धिमान रोबोट- आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस तकनीकी के उपयोग से निर्मित रोबोट किसी मानव द्वारा दिए गए कार्य करने में सक्षम हैं। उनके पास वास्तविक दुनिया के भौतिक डाटा, जैसे कि गति, ध्वनि, विक्षेप, प्रकाश, गर्मी, तापमान और दबाव का अनुमान लगाने के लिए सेंसर हैं। उनके पास कुशल प्रोसेसर, अनेक सेंसर और विशाल मेमोरी होती है। इसके अलावा वे अपनी पिछली गलतियों से सीखने में सक्षम हैं और वे नए वातावरण के लिए आसानी से अनुकूलित हो सकते हैं।

सोफिया एक ह्यूमैनॉयड रोबोट है। इसे हांगकांग की कंपनी 'हेनसन रोबोटिक्स' के संस्थापक डॉ. डेविड हेनसन ने बनाया है। इस सोफिया रोबोट की सबसे खास बात यह है कि इसे लोगों से सीखने और उनके साथ काम करने तथा परस्पर बातचीत करने के लिए बनाया गया है। दुनिया के कई देशों में सोफिया का इंटरव्यू लिया जा चुका है और उनमें सोफिया ने बहुत सारे रोचक जवाब भी दिए और लोगों से संवाद किया। अगर हम देखें तो सोफिया ह्यूमैनॉयड रोबोट 21वीं सदी का एक बहुत ही बड़ा आविष्कार है जो आगे चलकर मानव जीवन के लिए बहुत अहमियत रखने वाला है। इसे अक्टूबर 2017 में सऊदी अरब की नागरिकता भी प्राप्त हो गयी है।

दृष्टि प्रणाली- आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस तकनीकी युक्त सिस्टम कम्प्यूटर पर दृश्य इनपुट को समझ कर उसकी व्याख्या कर सकते हैं। उदाहरण के लिए एक जासूसी हवाई जहाज या कृत्रिम उपग्रह आसमान से फोटो खींचता है जिनका उपयोग स्थानीय जानकारी लेने और क्षेत्र के नक्शे बनाने में किया जाता है। डॉक्टर क्लीनिकल एक्सपर्ट सिस्टम का उपयोग मरीज की बीमारी जानने में करता है। फोरेंसिक एक्सपर्ट द्वारा बनाए गए चित्रों से पुलिस कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर का उपयोग करके अपराधी के चेहरे की पहचान कर सकती है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और रोबोटिक्स

रोबोटिक्स, तकनीकी विज्ञान की ऐसी शाखा है जो आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस तकनीकी के बेहद करीब है। इंसान और जानवर नेचुरल इंटेलिजेंस (NI) तकनीकी से काम करते हैं। जबकि रोबोट्स आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) तकनीकी से काम करते हैं। कम्प्यूटर साइंस में इस तकनीकी को 'इंटेलिजेंट एजेंट' भी कहा जाता है। वैज्ञानिकों ने एक ऐसी चिप डेवलप करने में कामयाबी हासिल कर ली है जो इंसान के भीतर पैदा होने वाले प्रेम या नफरत संबंधी भावनाओं की तरह सोच सकेगी। इसके लिए चिप में मनुष्य के दिमाग में स्थित न्यूरॉन के समान गतिविधियों का समावेश किया गया है। इस चिप में आर्टिफिशियल तकनीक का इस्तेमाल कुछ इस प्रकार किया गया है जो रोबोट या कम्प्यूटरों में सुरक्षा तंत्र अथवा जांच के काम को और अधिक सटीक बना देगा। प्रसिद्ध जर्नल 'साइंस एंड टेक्नोलॉजी डेली' में प्रकाशित रिपोर्ट के मुताबिक इस चिप को बीजिंग की कैम्ब्रिकॉन तकनीकी के आधार पर विकसित किया गया है। रिपोर्ट के मुताबिक यह कैम्ब्रिकॉन चिप व्यावसायिक रूप से बाजार में बहुत जल्द उपलब्ध नहीं हो सकेगी लेकिन इससे आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस उद्योग में बड़ी क्रांति आ सकती है। विशेषज्ञों ने बताया यह चिप स्मार्ट डिवाइस को ठीक वैसी ही सोच देगी जैसे किसी इंसान का दिमाग सोचता है। इसका उपयोग रोबोट और कम्प्यूटर से संबंधित किसी भी डिवाइस के काम करने की क्षमता को पूरी तरह से बदल डालेगा। इस चिप में इंसान के दिमाग में मौजूद न्यूरॉन के समान गतिविधियां शामिल होंगी जो किसी भी कम्प्यूटर को ठीक इंसानी दिमाग जैसी ताकत देने में कामयाब हो सकेगी। इस चिप का कंप्यूटरों या रोबोट में इस्तेमाल होने पर उनमें ठीक वैसी गतिविधियां विकसित हो सकेगी जो क्रोध या अन्य भावनाओं के दौरान इंसान के दिमाग में होती हैं। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के नजरिए से यह बड़ी कामयाबी है क्योंकि मशीनें या रोबोट्स उस ज्ञान या जानकारी से आगे बढ़ते हुए पाए गए जो कोड्स की मार्फत उन्हें सिखाई गई थीं। इसे दुनिया में चौथी क्रांति के रूप में भी देखा जा रहा है कि जब ऐसी अक्लमंद मशीनें हमारे इर्द-गिर्द होंगी जो इंसानों की जगह ले लेंगी और हर वह काम करेंगी जो इंसान करते हैं। इंसानों के पिछड़ जाने का खतरा तब पैदा होता है जब एआई उन मशीनों में स्वतः ही स्थिति के मुताबिक काम करने की क्षमता विकसित कर देती है। हालांकि कम्प्यूटर विशेषज्ञ और वैज्ञानिक कहते हैं कि फिलहाल एआई का सामर्थ्य इसकी प्रोग्रामिंग पर निर्भर करता है। ऐसे में यदि फैक्ट्रियों और घरों में काम करने वाले एआई से लैस रोबोट को अचानक किसी घटना से जूझना पड़े तो वह नाकाम हो जाता है क्योंकि हर आकस्मिक घटना की पहले से प्रोग्रामिंग नहीं हो सकती। हालांकि भविष्य में अक्लमंद मशीनें इंसानों की तरह ही सोचना-समझना शुरू कर देंगी। ऐसा होने में अनुमानतः सौ साल से कम नहीं लगेंगे। इतना समय इसलिए लगेगा क्योंकि इंसान बहुत थोड़ी

जानकारी के सहारे बहुत कुछ सीख सकता है, जबकि कम्प्यूटर को उतना ही सीखने के लिए बहुत ज्यादा डेटा और बेहद कुशल सॉफ्टवेयर की जरूरत होती है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का भविष्य

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस कंपनियों के बढ़ते बाजार के चलते उनकी आय तेजी से बढ़ रही है। एक अनुमान के मुताबिक 2024 तक इन कंपनियों का कारोबार 306.1 करोड़ डॉलर को छूने का अनुमान है। एवेंडस कैपिटल की एक रिपोर्ट के अनुसार आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस क्षेत्र में भी डीप लर्निंग का क्षेत्र सबसे तेजी से विकसित होगा और ऐसी कंपनियों की आय में इसकी हिस्सेदारी सबसे ज्यादा होगी। रिपोर्ट में दावा किया गया है कि "आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस कंपनियों की आय का अनुमान उसकी तेज वृद्धि पर आधारित है क्योंकि यह क्षेत्र सालाना 40% की दर से वृद्धि कर रहा है।" रोबोट की मांग बढ़ी है जिससे आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस क्षेत्र में निवेश के साथ-साथ विलय एवं अधिग्रहण की गतिविधियां भी बढ़ी हैं। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस इंडस्ट्री में पिछले तीन साल में 11.5 अरब डॉलर का निवेश हुआ है और 2017 में वेंचर कैपिटलिस्ट के 6 अरब डॉलर का निवेश करने की उम्मीद है। सर्विसेस वर्टिकल के सह-प्रमुख पुनीत शिवम के अनुसार, "पिछले कुछ सालों में इस क्षेत्र में निवेश के तेजी से बढ़ने का अहम कारण स्वचालन प्रक्रिया और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की बढ़ी हुई जरुरत है।" उन्होंने कहा कि आजकल कंपनियां आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के लिए ज्यादा बजट रख रही हैं ताकि इसे ग्राहकों की संख्या बढ़ाने और भारतीय बाजार में अपनी हिस्सेदारी बढ़ाने वाली एक अमूल्य संपत्ति बनाया जा सके। यह आने वाले समय में भी जारी रहेगा क्योंकि आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का नया और उन्नत संस्करण आ रहा है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस- संभावित खतरे

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) कम्प्यूटर और रोबोटिक्स की दुनिया में क्रांति जैसी है। यह किसी रोबोट को बुद्धि और समझ देने जैसा है। एआई युक्त रोबोट या यंत्र अपने आसपास के परिवेश के हिसाब से खुद फैसले करने में सक्षम होते हैं। यह हॉलीवुड की उन फिल्मों जैसा है जिसमें हीरो अपने रोबोट से बातें करता है और सलाह लेता है। एआई युक्त मशीनों से जितने फायदे हैं, उतने ही खतरे भी हैं। विशेषज्ञों का कहना है कि सोचने-समझने वाले रोबोट अगर किसी कारण या परिस्थिति में मनुष्य को अपना दुश्मन मानने लगें, तो मानवता के लिए खतरा पैदा हो सकता है। सभी मशीनें और हथियार इंसान से बगावत कर सकते हैं। ऐसी स्थिति की कल्पना हॉलीवुड की 'टर्मिनेटर' जैसी फिल्म में की गई है।

ऐसा कहा जा रहा है कि आर्टिफिशियल इंटेलिजेन्स से इंसान के लिए काम कम हो जायेंगे। मानव की जगह मशीनों को काम में लिया जाएगा जिसके कई नुकसान भी हो सकते हैं। मशीन स्वयं ही निर्णय लेने लगेंगी और उस पर नियंत्रण नहीं किया गया तो वह मानव सभ्यता के लिए खतरनाक हो सकता है। मशीनों में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस पर महान ब्रिटिश वैज्ञानिक स्टीफन हॉकिंग ने चेताया था। उनका कहना था कि तमाम अच्छाइयों के बावजूद मशीनों को बुद्धि देना मानव इतिहास की सबसे बुरी घटना हो सकती है। ऐसा हुआ तो मनुष्य अपनी ही बर्बादी का किस्सा गढ़ने वाला जीव बनकर रह जाएगा। हॉकिंग महोदय कैंब्रिज यूनिवर्सिटी में लिवरहम सेंटर फॉर द फ्यूचर ऑफ इंटेलिजेंस (एलसीएफआई) के उद्घाटन के मौके पर बोल रहे थे। उन्होंने कहा था कि, "मुझे लगता है कि आज की तारीख में मनुष्य के दिमाग और कम्प्यूटर में बहुत फर्क नहीं रह गया है। एआई इसी कड़ी की चीज है। मैं मानता हूँ कि एआई का विकास मानव सभ्यता की सबसे बड़ी कामयाबी हो सकती है लेकिन यदि इसके खतरों से निपटने के तरीके नहीं समझे गए तो यह आखिरी उपलब्धि बनकर रह जाएगी।" एआई के दुष्प्रभाव को लेकर हॉकिंग यह भी कहा था कि, "इससे शक्तिशाली स्वचालित हथियार बनाए जा सकते हैं। मशीनों की सोच मनुष्य की सोच से टकरा सकती है जिससे भयावह स्थिति पैदा हो जाएगी। इसीलिए दो साल पहले मैंने तथा कई अन्य लोगों ने इस पर विस्तृत शोध की जरूरत बताई थी। मुझे खुशी है कि कुछ लोग हमारी बात सुन रहे हैं।" हॉकिंग हालांकि इसके अच्छे पक्ष को भी नजरअंदाज नहीं करते थे। उन्हें उम्मीद थी कि मशीनों को बुद्धि प्रदान कर मानव औद्योगिकीकरण के कारण प्रकृति तथा पर्यावरण को हुए नुकसान की भरपाई करने में भी सक्षम हो सकता है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की तकनीकी के सकारात्मक एवं नकारात्मक पक्षों के गहन विश्लेषण की आवश्यकता है। शास्त्रों में कहा गया है- 'अति सर्वत्र वर्जयेत्' अर्थात् किसी भी चीज का अतिरेक वर्जित है। यह बात आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की तकनीकी के संदर्भ में भी लागू होती है। अगर कृत्रिम बुद्धिमता पर बेवजह निर्भरता बढ़ती गयी तो यह मानवता के लिए बहुत बड़ा खतरा बन सकती है। इसकी आशंका प्रख्यात भौतिकशास्त्री स्टीफन हॉकिंग जैसे वैज्ञानिक पहले ही जता चुके हैं। इसलिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता के विकास में विवेक तथा सतर्कता की बहुत जरूरत होगी। इसके संभावित खतरे बेहद चिंताजनक हैं जिनकी अनदेखी नहीं की जा सकती।

vigyan-lekhak@gmail-com

आईआरएनएसएस - 1 आई का सफल प्रक्षेपण

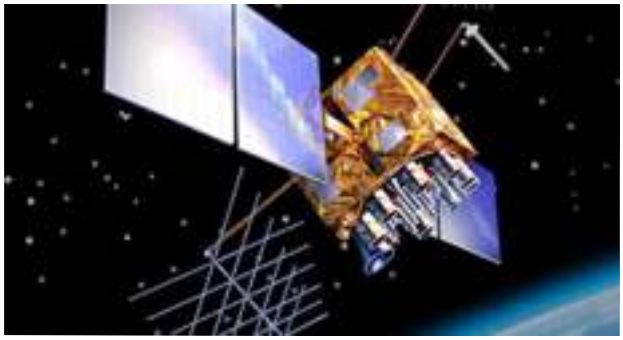

शशांक द्विवेदी

राजस्थान मेवाड़ यूनिवर्सिटी के उपनिदेशक शशांक द्विवेदी 'टेक्नीकल टुडे' नामक पत्रिका का संपादन कर रहे हैं। वे विगत दो दशकों से विज्ञान संचारक और विज्ञान लेखन के रूप में भी कार्य कर रहे हैं। देश के प्रतिष्ठित विज्ञान पत्रिकाओं में आपके लेख नियमित रूप से प्रकाशित एवं चर्चित हुए हैं।

एक बड़ी कामयाबी हासिल करते हुए भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) ने नेवीगेशन सैटलाइट आईआरएनएसएस-1 आई का आंध्र प्रदेश के श्रीहरिकोटा से सफल प्रक्षेपण किया। यह भारत के नेवीगेशन उपग्रहों की श्रेणी का आठवां उपग्रह है। पीएसएलवी ने उड़ान भरने के 19 मिनट बाद उपग्रह को कक्षा में स्थापित कर दिया। यह पीएसएलवी के 43 प्रक्षेपणों में से 41वां सफल प्रक्षेपण था। 1,425 किलोग्राम वजनी इस उपग्रह का निर्माण इसरो के सहयोग से बेंगलुरू की निजी कंपनी अल्फा डिजाइन टेक्नोलॉजिज ने किया है। निजी इंडस्ट्री द्वारा बनाया गया दूसरा उपग्रह है। पहला उपग्रह आईआरएनएसएस -1 एच को कक्षा में स्थापित करने का पिछले वर्ष का प्रक्षेपण असफल रहा था। इसरो के चेयरमैन के सिवन ने मिशन को सफल बताते कहा कि इस उपग्रह के आईआरएनएसएस-1 ए का स्थान लेने की संभावना है जो उन 7 नेवीगेशन उपग्रहों में से एक है जो तकनीकी खामी के बाद निष्प्रभावी हो गया था। ये सातों नेवीगेशन उपग्रहों के समूह का हिस्सा हैं। स्वदेशी जीपीएस नाविक के तहत इसरो के अभी तक 8 आईआरएनएसएस सैटलाइट छोड़े जा चुके हैं। आईआरएनएसएस यानि इंडियन रीजनल नेविगेशन सैटलाइट सिस्टम, इसरो द्वारा विकसित एक सिस्टम है, जो स्वदेशी जीपीएस तकनीक पर आधारित है। इसका मुख्य उद्देश्य देश और उसकी सीमा से 1500 किलोमीटर की दूरी के हिस्से में इसकी उपयोगकर्ता को सही जानकारी देना है। आईआरएनएसएस-1 आई इसरो की नाविक प्रणाली का हिस्सा होगा। यह सैटलाइट मैप तैयार करने, समय का बिल्कुल सही पता लगाने, नेविगेशन की पूरी जानकारी, समुद्री नेविगेशन के अलावा सैन्य क्षेत्र में भी सहायता करेगी।

आईआरएनएसएस अमेरिका के ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम (जीपीएस) की तर्ज पर दिशा सूचक सेवाएँ मुहैया करायेगा। इस शृंखला में पहले उपग्रह का प्रक्षेपण जुलाई 2013 में किया गया था। भारतीय क्षेत्रीय दिशासूचक उपग्रह प्रणाली (आईआरएनएसएस) के तहत प्रस्तावित सात उपग्रहों के प्रक्षेपण की शृंखला का यह अंतिम उपग्रह है। सालों से भारतीय मछुआरे और नाविक चाँद-सितारों की गति से समुद्र में यात्राएं करते थे। यह उपग्रह उनको समर्पित है। कुल मिलाकर इसरो की यह ऐतिहासिक उपलब्धि है जिस पर देश को गर्व है क्योकि खुद अपनी दिशा सूचक प्रणाली होना कोई आसान बात नहीं है।

भारत का आईआरएनएसएस अमेरिका के ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम (जीपीएस), रूस के ग्लोनास, यूरोप के गलीलियो जैसा है। इस कामयाबी के साथ ही भारत

का अपना न केवल उपग्रहों का जाल तैयार हो जाएगा बल्कि देश के पास अपना जीपीएस शुरू हो जाएगा। अब जीपीएस के लिए भारत को दूसरे देशों पर निर्भर रहना नहीं पड़ेगा। यानी ये कामयाबी बहुत खास है। भारतीय अरमानों को पंख लगाने वाला इसरो का ये कार्यक्रम अंतरिक्ष अनुसंधान के इतिहास में भारत का गौरव बढाने वाला साबित होगा। इस मिशन की कामयाबी के साथ ही भारत उन चुनिंदा देशों की जमात में शामिल हो गया है जिनके पास नेविगेशन प्रणाली है। इस तरह की तकनीक अभी अमेरिका और रूस के पास ही है। यूरोपीय संघ और चीन भी 2020 तक इसे विकसित कर पायेंगे, लेकिन भारत उससे बहुत पहले यह कामयाबी हासिल कर लेगा। यह अभियान देश के अंतरिक्ष कार्यक्रमों को नई दिशा प्रदान कर रहा है। इससे देश का नेवीगेशन सिस्टम मजबूत होगा जो परिवहनों तथा उनकी सही स्थिति एवं स्थान का पता लगाने में यह सहायक सिद्ध होगा। इस प्रक्षेपण से देश इंडियन रीजनल नेविगेशनल सैटेलाइट सिस्टम आईआरएनएसएस शुरू करने के लिए तैयार हैं क्योंकि भारत ने सात उपग्रहों को उनकी कक्षा में स्थापित कर दिया है।

नेवीगेशन सिस्टम के लिए आत्मनिर्भरता किसी भी देश के लिए काफी मायने रखती है। एक रिपोर्ट के अनुसार देशी नेवीगेशन सिस्टम आम आदमी की जिंदगी को सुधारने के अलावा सैन्य गतिविधियों, आंतरिक सुरक्षा और आतंकवाद-रोधी उपायों के रूप में यह सिस्टम बेहद उपयोगी होगा। खासकर 1999 में सामने आयी कारगिल जैसी घुसपैठ और सुरक्षा संबंधी चुनौतियों से इसके जरिये समय रहते निपटा जा सकेगा। कारगिल घुसपैठ के समय भारत के पास ऐसा कोई सिस्टम मौजूद नहीं होने के कारण सीमा पार से होने वाले घुसपैठ को समय रहते नहीं जाना जा सका। बाद में यह चुनौती बढ़ने पर भारत ने अमेरिका से जीपीएस सिस्टम से मदद मुहैया कराने का अनुरोध किया गया था। हालांकि तब अमेरिका ने मदद मुहैया कराने से इनकार कर दिया था। उसके बाद से ही जीपीएस की तरह ही देशी नेविगेशन सेटेलाइट नेटवर्क के विकास पर जोर दिया गया और अब भारत ने खुद इसे विकसित कर बड़ी कामयाबी हासिल की है।

आईआरएनएसएस प्रणाली दो तरह की सेवाएँ मुहैया कराएगा। एक मानक पोजीशनिंग सेवा जो कि सभी उपयोगकर्ताओ के लिए उपलब्ध होगी दूसरी सीमित सेवा जो कूट सेवा होगी वह केवल अधिकृत उपयोगकर्ताओं के लिए होगी। भारतीय क्षेत्रीय नौवहन उपग्रह प्रणाली इंडियन रीजनल नेविगेशनल सैटेलाइट सिस्टम (आईआरएनएसएस) इसरो की एक महत्वाकांक्षी योजना है। इसरो ने आईआरएनएसएस का विकास इस तरह किया है कि न सिर्फ यह अमेरिका के ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम जीपीएस के समकक्ष खड़ा हो सके बल्कि भविष्य में उससे भी बेहतर साबित हो सके। आईआरएनएसएस के तहत भारत अपने भौगोलिक प्रदेशों तथा अपने आसपास के कुछ क्षेत्रों तक नेविगेशन की सुविधा रख पाएगा। इसके तहत इसरो के नेविगेशन सैटेलाइट अंतरिक्ष में प्रक्षेपण के बाद 36000 किमी की दूरी पर पृथ्वी की कक्षा का चक्कर लगाएंगे। यह भारत तथा इसके आसपास के 1500 किलोमीटर के दायरे में चक्कर लगाएंगे। जरूरत पड़ने पर उपग्रहों की संख्या बढ़ाकर नेविगेशन क्षेत्र में और विस्तार किया जा सकता है। आइआरएनएसएस दो माइक्रोवेव फ्रीक्वेंसी बैंड एल 5 और एस पर सिग्नल देते हैं। यह स्टैंडर्ड पोजीशनिंग सर्विस तथा रिस्ट्रिक्टेड सर्विस की सुविधा प्रदान करेगा। इसकी स्टैंडर्ड पोजीशनिंग सर्विस सुविधा जहां भारत में किसी भी क्षेत्र में किसी भी आदमी की स्थिति बताएगा, वहीं रिस्ट्रिक्टेड सर्विस सेना तथा महत्वपूर्ण सरकारी कार्यालयों के लिए सुविधाएं प्रदान करेगा ।

आईआरएनएसएस प्रणाली दो तरह की सेवाएँ मुहैया कराएगा। एक मानक पोजीशनिंग सेवा जो कि सभी उपयोगकर्ताओं के लिए उपलब्ध होगी, दूसरी सीमित सेवा जो कूट सेवा होगी वह केवल अधिकृत उपयोगकर्ताओं के लिये होगी। भारतीय क्षेत्रीय नौवहन उपग्रह प्रणाली इंडियन रीजनल नेविगेशनल सैटेलाइट सिस्टम (आईआरएनएसएस) इसरो की एक महत्वाकांक्षी योजना है।

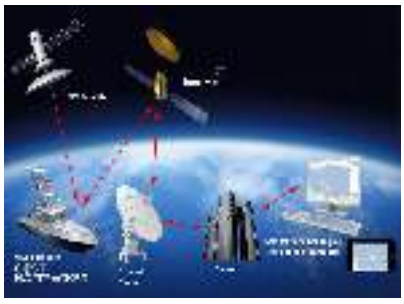

कैसे काम करता है जीपीएस?

जीपीएस (ग्लोबल पहजिशनिंग सिस्टम) एक उपग्रह प्रणाली पर काम करता है। जीपीएस सीधे सेटेलाइट से कनेक्ट होता है और उपग्रहों द्वारा भेजे गए संदेशों पर काम करती है।

भारतीय आइआरएनएसएस अमेरिकन नेविगेशन सिस्टम जीपीएस से बेहतर साबित हो सकता है। मात्र 7 सैटेलाइट के जरिए यह अभी 20 मीटर के रेंज में नेविगेशन की सुविधा दे सकता है, जबकि उम्मीद की जा रही है कि यह इससे भी बेहतर 15 मीटर रेंज में भी यह सुविधा देगा। जीपीएस की इस कार्यक्षमता के लिए 24 सैटेलाइट काम करते हैं, जबकि आईआरएनएसएस के लिए मात्र सात सैटेलाइट जरूरी है।

जीपीएस डिवाइस उपग्रह से प्राप्ता सिंगनल द्वारा उस जगह को मैप में दशार्ती रहती है। वर्तमान में जीपीएस तीन प्रमुख क्षेत्रों से मिलकर बना हुआ है, स्पेस सेगमेंट, कंट्रोल सेगमेंट और यूजर सेगमेंट। जीपीएस रिसीवर अपनी स्थिति का ऑकलन, पृथ्वी से ऊपर रखे गए जीपीएस सेटेलाइट द्वारा भेजे जाने वाले सिग्नलों के आधार पर करता है। प्रत्येक सेटेलाइट लगातार मैसेज ट्रांसमीट करता रहता है। रिसीवर प्रत्येक मैसेज का ट्रांजिट समय नोट करता है और प्रत्येक सेटेलाइट से दूरी की गणना करता है। ऐसा माना जाता है कि रिसीवर बेहतर गणना के लिए चार सेटेलाइट का इस्तेमाल करता है। इससे यूजर की थ्रीडी स्थिति (अक्षांश, देशांतर रेखा और उन्नतांश) के बारे में पता चल जाता है। एक बार जीपीएस की स्थिति का पता चलने के बाद, जीपीएस यूनिट दूसरी जानकारियां जैसे कि स्पीड, ट्रेक, ट्रिप, दूरी, जगह से दूरी, सूर्य उगने और डूबने के समय के बारे में जानकारी एकत्र कर लेता है।

भारतीय आइआरएनएसएस अमेरिकन नेविगेशन सिस्टम जीपीएस से बेहतर साबित हो सकता है। मात्र 7 सैटेलाइट के जरिए यह अभी 20 मीटर के रेंज में नेविगेशन की सुविधा दे सकता है, जबकि उम्मीद की जा रही है कि यह इससे भी बेहतर 15 मीटर रेंज में भी यह सुविधा देगा। जीपीएस की इस कार्यक्षमता के लिए 24 सैटेलाइट काम करते हैं, जबकि आईआरएनएसएस के लिए मात्र सात सैटेलाइट जरूरी है लेकिन यहाँ यह ध्यान रखना जरूरी है कि जीपीएस की रेंज विश्व व्यापी है जबकि आईआरएनएसएस की रेंज भारत और एशिया तक ही सीमित है। सुरक्षा एजेंसियों और सेना के लिए सुरक्षा की दृष्टि से भी आईआरएनएसएस काफी बेहतर है। नेविगेशन सैटेलाईट आईआरएनएसएस के अनुप्रयोगों में नक्शा तैयार करना, जियोडेटिक आंकड़े जुटाना, समय का बिल्कुल सही पता लगाना, चालकों के लिए दृश्य और ध्वनि के जरिये नौवहन की जानकारी, मोबाइल फोनों के साथ एकीकरण, भूभागीय हवाई तथा समुद्री नौवहन तथा यात्रियों तथा लंबी यात्रा करने वालों को भूभागीय नौवहन की जानकारी देना आदि शामिल हैं। आईआरएनएसएस के सात उपग्रहों की यह शृंखला स्पेस सेगमेंट और ग्राउंड सेगमेंट दोनों के लिए है। आईआरएनएसएस के तीन उपग्रह भूस्थिर कक्षा जियोस्टेशनरी ऑर्बिट के लिए और चार उपग्रह भूस्थैतिक कक्षा जियोसिन्क्रोनस ऑर्बिट के लिए हैं। अब सातों उपग्रहों के प्रक्षेपण के बाद आईआरएनएसएस प्रणाली ठीक ढंग से काम करना शुरू कर देगी। आईआरएनएसएस-1 आई का सफल प्रक्षेपण एक बड़ी कामयाबी है जिससे देश का अपना खुद का नेवीगेशन सिस्टम विकसित हो जाएगा जो पूरे देश के लिए गर्व का विषय है क्योंकि ऐसी प्रणाली विश्व के सिर्फ कुछ ही देशों के पास है ।

dwivedi.shashank15@gmail.com

'जलवायु परिवर्तन'
लेखक : डॉ. दिनेश मणि
प्रकाशक : आईसेक्ट विश्वविद्यालय
मूल्य : 200 रुपये

डॉ. दिनेश मणि की यह पुस्तक जलवायु और उसके घटक, जलवायु परिवर्तन के कारक, जलवायु परिवर्तन के प्रभाव, जलवायु परिवर्तन और वैश्विक तापन, जलवायु परिवर्तन और पर्यावरण, जलवायु परिवर्तन और जैव-विविधता, जलवायु परिवर्तन और कृषि, जलवायु परिवर्तन और मानव स्वास्थ्य, जलवायु परिवर्तन से सम्बन्धित समझौते एवं सम्मेलन विषयक जानकारी प्रस्तुत करती है।

15 जून 1965 को सुल्तानपुर में जन्मे डॉ. मणि एम.एस-सी, डीफिल, डी. एस-सी, में शिक्षा प्राप्त इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं। अब तक आपने विज्ञान विषयों पर 50 से अधिक हिन्दी में किताबें लिखी हैं। 8 पुस्तकों का लेखन अंग्रेजी में तथा 100 शोध पत्र लिखे हैं। अब तक आपके 1000 से अधिक प्रकाशित और 30 वार्ताएं दूरदर्शन और आकाशवाणी प्रसारित हुए हैं। सरस्वती नामित पुरस्कार, सूचना प्रौद्योगिकी राष्ट्रीय पुरस्कार, प्रकृति ऊर्जा पुरस्कार, अनुसृजन सम्मान, डॉ. संपूर्णानंद नामित पुरस्कार, बाबू राव विष्णु पराड़कर नामित पुरस्कार जगदीश गुप्त सर्जना पुरस्कार, बाबू श्यामसुन्दर दास सर्जना पुरस्कार, डॉ. जगदीश चंद्र बोस पुरस्कार, आत्माराम पुरस्कार, आदि से सम्मानित।

डीएनए कानून खुलेंगे जिंदगी के राज

प्रमोद भार्गव

प्रमोद भार्गव एक पत्रकार और विज्ञान संचारक के रूप में देशभर में जाने जाते हैं वहीं उनका दूसरा पक्ष एक लोकप्रिय कथाकार का भी है। समकालीन परिदृश्य और समसामयिक विषयों जिनमें विज्ञान भी शामिल है, पर प्रमोद भार्गव की गहरी नज़र रहती है। वे तात्कालिक विज्ञान-अनुसंधान और हलचल पर लिखने के लिये खासे चर्चित हैं। प्रमोद भार्गव म.प्र. के शिवपुरी में निवास करते हैं।

केंद्र सरकार ने उच्चतम न्यायालय को बताया है कि वह संसद के मानसून सत्र में डीएनए प्रोफाइलिंग बिल यानी, 'मानव डीएनए सरंचना विधेयक' पेश करेगी। इस भरोसे के बाद न्यायालय ने गैर-सरकारी संगठन लोकनीति फाउंडेशन की 6 साल पुरानी जनहित याचिका का निपटारा कर दिया। इस याचिका में फाउंडेशन ने मांग की थी कि लावारिस शवों की डीएनए जांच का संग्रह हो, जिससे गुमशुदा लोगों से उसका मिलान करके मृतक व्यक्ति की पहचान सुनिश्चित की जा सके। हमारी हरिद्वार, प्रयाग और वाराणसी जैसी धर्मनगरियों में हर साल मोक्ष के लिए आए लाखों में से सैंकड़ों लोग गुमनामी के कफन में दफन हो जाते है। इन लावारिस शवों की पहचान के लिए यह याचिका लगाई गई थी। इस नाते इस याचिका की पवित्रता पर संदेह करना बेमानी है।

अलबत्ता केंद्र सरकार इस बहाने जो 'मानव संरचना डीएनए विधेयक-2015' ला रही है, उसके जरिए देश के हरेक नागरिक का जीन आधारित कंप्यूटरीकृत डाटाबेस तैयार होगा और एक क्लिक पर मनुष्य की आंतरिक जैविक जानकारियां कम्प्युटर स्क्रीन पर होंगी। लिहाजा इस विधेयक को भारतीय संविधान के अनुच्छेद-21 में आम नागरिक के मूल अधिकारों में शामिल गोपनीयता के अधिकार का खुला उल्लंघन माना जा रहा है। इससे यह आशंका भी उत्पन्न हो रही है कि तकनीक आधारित इस डाटाबेस का दुरुपयोग स्वास्थ्य एवं उपचार, बीमा और प्रौद्योगिक उत्पादों से जुड़ी कंपनियाँ बाला-बाला लीक न करने लग जाएं। व्यक्ति की पहचान से जुड़े बहुउद्देशीय आधार कार्ड के साथ भी ये आशंकाएं जुड़ी थीं, जो अब सही साबित हो रही हैं। फेसबुक और ट्विटर ने भी 'कैंब्रिज एनालिटिका' को गोपनीयता से जुड़ा उपभोक्ताओं का निजी डाटा बेचने का काम किया है। इन सच्चाईयों के परिप्रेक्ष्य में यदि डीएनए के नमूने भी लीक कर दिए जाते हैं तो यह व्यक्ति की जिंदगी के साथ आत्मघाती कदम होगा।

हालाँकि इसे अस्तित्व में लाने के प्रमुख कारणों में अपराध पर नियंत्रण, शवों की पहचान और बीमारी का रामबाण इलाज बताया जा रहा है। सवा अरब की आबादी और

जीन बैंक में नस्ल और जाति के आधार पर भी आंकड़े एकत्रित करने का प्रावधान हैं। इस दृष्टि से दावा तो यह किया जा रहा है कि मानव समूहों के बीच नस्लीय भेदभाव के वंशाणु नहीं मिलते हैं। सभी नस्ल और जाति के मनुष्यों में 99.99 प्रतिशत गुण-सूत्र एक जैसे पाए गए हैं।

भिन्न-भिन्न नस्ल व जाति वाले देश में कोई निर्विवाद व शंकाओं से परे डाटाबेस तैयार हो जाए यह अपने आप में एक बड़ी चुनौती है। क्योंकि अब तक हम न तो विवादों से परे मतदाता पहचान पत्र बना पाए और न ही नागरिक को विशिष्ट पहचान देने का दावा करने वाला आधार कार्ड? लिहाजा देश के सभी लोगों की जीन आधाारित कुण्डली बना लेना भी एक दुष्कर व असंभव कार्य लगता है?

विधेयक के सामने आए प्रारूप के पक्ष-विपक्ष संबंधी पहलुओं को जानने से पहले थोड़ा जीन कुण्डली की आतंरिक रूपरेखा जान लें। मानव-शरीर में डी ऑक्सीरिवोन्यूक्लिक एसिड यानी डीएनए नामक सर्पिल सरंचना अणु कोशिकाओं और गुण-सूत्रों का निर्माण करती है। जब गुण-सूत्र परस्पर समायोजन करते हैं तो एक पूरी संख्या 46 बनती है, जो एक संपूर्ण कोशिका का निर्माण करती है। इनमें 22 गुण-सूत्र एक जैसे होते हैं, किंतु एक भिन्न होता है। गुण-सूत्र की यही विषमता स्त्री अथवा पुरूष के लिंग का निर्धाररण करती है। डीएनए नामक यह जो मौलिक महारसायन है, इसी के माध्यम से बच्चे में माता-पिता के आनुवंशिक गुण-अवगुण स्थानांतरित होते हैं। वंशानुक्रम की यही वह बुनियादी भौतिक रासायनिक, जैविक तथा क्रियात्मक ईकाई है,जो एक जीन बनाती है। 25,000 जीनों की संख्या मिलकर एक मानव जीनोम रचती है, जिसे इस विषय के विशेषज्ञ पढ़कर व्यक्ति के आनुवांशिकी रहस्यों को किसी पहचान-पत्र की तरह पढ़ सकते हैं। मसलन यदि मानव-जीवन का खाका रिकॉर्ड करने का कानून वजूद में आ जाता है तो व्यक्ति की निजता के अधिकार के कोई मायने ही नहीं रह जाएंगे?

मानव-जीनोम तीन अरब रासायनिक रेखाओं का तंतु है, जो यह परिभाषित करता है कि वास्तव में मनुष्य है क्या? इसे पढ़ने के लिए 1980 में 'मानव-जीनोम परियोजना' लाई गई थी। जिस पर 13,800 करोड़ रुपय खर्च हुए थे। इसमें अंतरराष्ट्रीय जीव व रसायन विज्ञानियों की बड़ी संख्या में भागीदारी थी। भिन्न मोर्चों पर दायित्व संभालते हुए इन विज्ञानियों ने इस योजना को 2001 में अंजाम तक पहुँचाया। मुकाम पर पहुँचने के बाद आधुनिक जीव वैज्ञानिक आज कोशिकीय रसायनशास्त्र की जटिलता का विश्लेषण करने में पारदर्शी दक्षता का दावा करने लगे हैं। गोया कि इस सफलता ने यह तय कर दिया कि जीव विज्ञान में रासायनिक विश्लेषण से जैसे सभी समस्याओं का तकनीकी समाधान संभव है?

जीन बैंक में नस्ल और जाति के आधार पर भी आंकड़े एकत्रित करने का प्रावधान हैं। इस दृष्टि से दावा तो यह किया जा रहा है कि मानव समूहों के बीच नस्लीय भेदभाव के वंशाणु नहीं मिलते हैं। सभी नस्ल और जाति के मनुष्यों में 99.99 प्रतिशत गुण-सूत्र एक जैसे पाए गए हैं। इसीलिए जीव-विज्ञानी दावा कर रहे हैं कि आनुवंशिक समानताओं की व्याख्या करके यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि सबके पुर्खे एक थे,जो पूर्वी अफ्रीका में ड़ेढ़ लाख साल पहले हुए थे। इसके उलट सेंटर फॉर सेल्युलर एंड मॉलिक्युलर बायोलॉजी के पूर्व निदेशक लालजी सिंह पहले ही कह चुके हैं कि वैश्विक आनुवंशिक मानचित्र पर डीएनए की श्रृंखला भारत की आबादी से मेल नहीं खाती। अतः इनके बारे में माना जाता है कि ये 65 हजार साल पहले अस्तित्व में आई और ग्रेटर अंडमानी जनजातियों के कहीं ज्यादा निकट हैं, जो भारतीय हैं। यही सबसे प्राचीन ज्ञात मानव हैं। वैसे भी भारत में इतनी नस्लीय और जातीय विविधताएं हैं कि इनकी नस्ल और जाति आधारित डीएनए जाँच का विश्लेषण भारत में जातिवाद को और पुख्ता ही करेगा। साथ ही, यह संदेह भी बना रहेगा कि जिस तरह ब्रिटिश शासनकाल में कुछ जातियों को आपराधिक जाति का दर्जा दे दिया गया था, उनका वंशानुक्रम खोज कर यह साबित न कर दिया जाए कि इनमें तो अपराध के लक्षण वंशानुगत हैं। जबकि जाति और अपराध का परस्पर कोई संबंध नहीं है। यह स्थिति बनती है तो सामुदायिक हितों के प्रतिकूल होगी।

जीन संबंधी परिणामों को सबसे अहम् चिकित्सा के क्षेत्र में माना जा रहा है। क्योंकि अभी तक यह शत-प्रतिशत तय नहीं हो सका है कि दवाएँ किस तरह बीमारी का प्रतिरोध कर उपचार करती हैं। जाहिर है, अभी ज्यादातर दवाएँ अनुमान के आधार पर रोगी को दी जाती हैं। जीन के सूक्ष्म परीक्षण से बीमारी की सार्थक दवा देने की उम्मीद बढ़ गई है। लिहाजा इससे चिकित्सा और जीव-विज्ञान के अनेक राज तो खुलेंगे ही, दवा उद्योग भी फले-फूलेगा। इसीलिए मानव-जीनोम से मिल रही सूचनाओं का दोहन करने के लिए दुनिया भर की दवा, बीमा और जीन-बैंक उपकरण निर्माता बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ अरबों का न केवल निवेश कर रही हैं, बल्कि राज्य सत्ताओं पर जीन-बैंक

हालाँकि जीन की किस्मों का पता लगाकर मलेरिया, कैंसर, रक्तचाप, मधुमेह और दिल की बीमारियों से कहीं ज्यादा कारगर ढंग से इलाज किया जा सकेगा, इसमें कोई संदेह नहीं है। लेकिन इस हेतु केवल बीमार व्यक्ति अपना डाटाबेस तैयार कराए, हरेक व्यक्ति का जीन डाटा इकट्ठा करने का क्या औचित्य है ?

बनाने का पर्याप्त दबाव भी बना रही हैं। आशंकाएँ तो यहां तक है कि यही कंपनियाँ सामाजिक समस्याओं से जुड़े बहाने ढूंढकर अदालत में एनजीओ से याचिकाएँ दाखिल कराती हैं।

हालाँकि जीन की किस्मों का पता लगाकर मलेरिया, कैंसर, रक्तचाप, मधुमेह और दिल की बीमारियों से कहीं ज्यादा कारगर ढंग से इलाज किया जा सकेगा, इसमें कोई संदेह नहीं है। लेकिन इस हेतु केवल बीमार व्यक्ति अपना डाटाबेस तैयार कराए, हरेक व्यक्ति का जीन डाटा इकट्ठा करने का क्या औचित्य है? क्योंकि इसके नकारात्मक परिणाम भी देखने में आ सकते हैं। चुनांचे, यदि व्यक्ति की जीन-कुंडली से यह पता चल जाए कि व्यक्ति को भविष्य में फलां बीमारी हो सकती है, तो उसके विवाह में मुश्किल आएगी? बीमा कंपनियां बीमा नहीं करेंगी और यदि व्यक्ति, एड्स से ग्रसित है तो रोग के उभरने से पहले ही उसका समाज से बहिष्कार होना तय है। गंभीर बीमारी की शंका वाले व्यक्ति को खासकर निजी कंपनियां नौकरी देने से भी वंचित कर देंगी। जाहिर है, निजता का यह उल्लंघन भविष्य में मानवाधिकारों के हनन का प्रमुख सबब बन सकता है?

मानव डीएनए संरचना विधेयक अस्तित्व में आ जाता है तो इसके क्रियान्वयन के लिए बड़ा ढाँचागत निवेश भी करना होगा। डीएनए नमूने लेने, फिर परीक्षण करने और फिर डेटा संधारण के लिए देश भर में प्रयोगशालाएँ बनानी होंगी। प्रयोगशालाओं से तैयार डेटा आंकड़ों को राष्ट्रीय व राज्य स्तर पर सुरक्षित रखने के लिए डीएनए डाटा-बैंक बनाने होंगे। जीनोम-कुण्डली बनाने के लिए ऐसे सुपर कम्प्यूटरों की जरूरत होगी, जो आज के सबसे तेज गति से चलने वाले कम्प्युटर से भी हजार गुना अधिक गति से चल सकें। बावजूद महारसायन डीएनए में चलायमान वंशाणुओं की तुलनात्मक गणना मुश्किल है। इस ढाँचागत व्यवस्था पर नियंत्रण के लिए विधेयक के मसौदे में डीएनए प्राधिकरण के गठन का भी प्रावधान है। हमारे यहाँ कम्प्यूटराइजेशन होने के पश्चात भी राजस्व-अभिलेख, बिसरा और रक्त संबंधी जांच-रिपोर्ट तथा आंकड़ों का रख-रखाव कतई विश्वसनीय व सुरक्षित नहीं है। भ्रष्टाचार के चलते जांच प्रतिवेदन व डेटा बदल दिए जाते हैं। ऐसी अवस्था में आनुवंशिक रहस्यों की गलत जानकारी व्यक्तिगत स्वतंत्रता तथा सामाजिक समरसता से खिलवाड़ कर सकती है। बावजूद निजी जेनेटिक परीक्षण को कानून के जरिए अनिवार्य बना देने में कंपनियाँ इसलिए लगी हैं, जिससे उपकरण और आनुवंशिक सूचनाएं बेचकर मोटा मुनाफा कमाया जा सके?

pramod.bhargava15@gmail.com

'ऊतक संवर्धन'
लेखक : प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव
प्रकाशक : आईसेक्ट विश्वविद्यालय
मूल्य : 200 रुपये

ऊतक संवर्धन तकनीक के बढ़ते प्रयोग एवं महत्व को ध्यान में रखते हुए पुस्तक रची गई है। हिंदी में ऊतक संवर्धन संबंधी साहित्य के अभाव को दूर करने का प्रयास प्रस्तुत प्रति के माध्यम से किया गया है।

कोशिकाओं के ऐसे समूह जो संरचना और कार्य में एक जैसे होते हैं, उन्हें ऊतक या टिश्यू कहते हैं। जैव-विविधता के संरक्षण की दिशा में ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा विलुप्तप्रायः वनस्पतियों एवं जीवों की विभिन्न प्रजातियों का विकास किया जा रहा है।

10 जुलाई 1939, बांसी जिला सिद्धार्थ नगर, उत्तरप्रदेश में जन्मे इस किताब के लेखक प्रेमचंद्र श्रीवास्तव ने एम. एस-सी. (वनस्पति शास्त्र) उत्तीर्ण करने के बाद पादप विषाणु एवं मृदा कवक पर शोध कार्य किया। अब तक लगभग 550 लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। विज्ञान पर अंटार्टिका, भारतीय सभ्यता के साक्षी, पेड़-पौधों का रोचक संसार, जीव प्रौद्योगिकी के बढ़ते कदम, वनस्पति विज्ञानी डॉ. जगदीशचंद्र बोस आदि पुस्तकें प्रकाशित, चर्चित और पुरस्कृत हुई। आपने कई पत्रिकाओं का संपादन भी किया। विज्ञान की गतिविधियों में आपका सक्रिय योगदान रहा।

रमन का चिर-स्मरणीय प्रभाव

डॉ. कपूरमल जैन

डॉ. कपूरमल जैन वरिष्ठ विज्ञान लेखक हैं। भौतिकी शास्त्र से संबंधित लेख लिखने में वे सिद्धहस्त हैं। घर-घर में विज्ञान जैसी लोकप्रिय शृंखला भी उन्होंने लिखी है। आण्विक भौतिकी के क्षेत्र में उन्होंने शोधकार्य किया है। अब तक सौ से अधिक शोधपत्र, लेख प्रकाशित हो चुके हैं। डॉ.कपूरमल जैन की लोक व्यापीकरण एवं विज्ञान की शिक्षण पद्धति में नवाचार लाने में गहरी रुचि है। वे भोपाल में निवास करते हैं तथा इस दिशा में कई वर्षों से कार्य कर रहें हैं।

सर सी.वी. रमन ने विज्ञान को नयी दिशा देने वाले जिस शोध को जिस समय किया था, उस हमारा देश स्वतंत्र नहीं था। यह वह समय था, जब शोध के लिए न कोई विशेष सुविधा उपलब्ध थी और न ही कोई प्रोत्साहन था। आर्थिक स्थिति भी शोध की दृष्टि से अनुकूल नहीं थी। स्वयं उनका प्रयोग, जिसने उन्हें नोबेल पुरस्कार दिलाया, वह मात्र 300 रूपये के उपकरण पर सम्पन्न हुआ था। इस तरह उन्होंने विपरीत परिस्थितियों में उत्कृष्ट शोध कर के दिखा दिया कि अगर दिली-इच्छा और जूनून हो तो कुछ भी पाने की सीमा से दूर नहीं होता।

रमन ने विश्व को चौंकाने वाले जिस प्रयोग को किया था, वह द्रवों के अणुओं से प्रकाश के प्रकीर्णन से संबधित था। इस प्रयोग ने वैज्ञानिकों को अणुओं की संरचनाओं को देखने के लिए एक बेशकीमती टूल उपलब्ध करा दिया। अपने प्रयोगों से उन्होंने वैज्ञानिकों को वह देखने, पहुँचने और समझने का रास्ता दिखा दिया, जो उस समय तक नामुमकिन प्रतीत हो रहा था। उनकी खोज वैसी ही थी जैसी भूसे के बहुत बड़े ढ़ेर में से छोटी सी सुई को ढूढ़ ले या शहर में हो रही बारिश की बूंदों में से कोई किसी गुलाबी बूंद को ढूढ़ कर दिखा दे या किसी कोयले की खदान में बैठी काली बिल्ली को खोज ले। अतः ऐसा कर रमन ने सचमुच ही दिखा दिया कि प्रतिकूल परिस्थितियों उत्कृष्ट शोध करने में भारतीय मेधा किसी से कम नहीं होती। वैज्ञानिक जगत इस खोज से इतना अधिक प्रभावित हो गया कि उनकी खोज की घोषणा के मात्र दो वर्षों के भीतर ही नोबेल पुरस्कार समिति ने इसे भौतिकी के नोबेल पुरस्कार हेतु चयनित कर विश्व-विज्ञान के क्षेत्र में भारत का परचम फहरा दिया।

रमन की जिज्ञासा

नोबेल पुरस्कार दिलाने वाली रमन की खोज-यात्रा की शुरूआत तब हुई, जब वे सन् 1921 में जहाज के द्वारा इंग्लैण्ड में आयोजित 'यूनिवर्सिटी साइंस कांग्रेस' में भाग लेने के लिए जा रहे थे। अपनी इस यात्रा के दौरान उन्हें मेडिटरेनियन सागर (Mediterranean sea) के 'नीले रंग' ने आकृष्ट किया। उन्हें इसका नीला दिखना चकित कर रहा था। अतः उनका जिज्ञासु मन इसके पीछे छिपे कारणों को जानने के लिए बेचैन हो गया। अपनी जिज्ञासा के समाधान हेतु, इंग्लैण्ड पहुँच कर, उन्होंने भौतिकी के नाबेल पुरस्कार विजेता लार्ड रैले से मुलाकात की, जिन्होंने आकाश के नीले दिखलाई पड़ने के कारण को हवा के कणों के द्वारा

हो रहे सौर-प्रकाश के 'प्रकीर्णन'के साथ जोड़ा था। रैले ने जिस सिद्धांत को विकसित किया था, उसके अनुसार उन किरणों का प्रकीर्णन सबसे अधिक होता है, जिनकी तरंगदैर्ध्य सबसे कम होती है। और, चूँकि सूर्य के प्रकाश में सबसे कम तरंगदैर्ध्य की तरंगों में नीले रंग का आधिक्य होता है, अतः आकाश नीला दिखलाई देता है। रैले ने रमन को समझाने की कोशिश की लेकिन, वे रमन को संतुष्टिदायक उत्तर नहीं दे सके। अतः अपनी वापसी-यात्रा के दौरान रमन ने स्वयं इसे समझने के लिए प्रयोग करने का निश्चय किया। प्रयोग के लिए उनकी जेब में सदैव एक पॉकेट साइज का 'डायरेक्ट विजन स्पेक्ट्रोस्कोप' रहता था। अतः इसकी सहायता से प्रकृति की प्रयोगशाला में उन्होंने जहाज पर ही कुछ अवलोकन लेना आरंभ किये। इन अवलोकनों में उन्हें कुछ 'नया' मिल रहा था, जो जल के कणों से सौर प्रकाश के प्रकीर्णन के होने को दर्शा रहा था। अतः कलकत्ता पहुँच कर उन्होंने बिना विलम्ब के गहन खोज यात्रा आरंभ कर दी। उनकी यह यात्रा तब तक जारी रही, जब तक कि उन्हें इसका तर्कजन्य वैज्ञानिक समाधान प्राप्त नहीं हो गया।

तरंगों में नीले रंग का आधिक्य होता है, अतः आकाश नीला दिखलाई देता है। रैले ने रमन को समझाने की कोशिश की लेकिन,वेरमन को संतुष्टिदायक उत्तर नहीं दे सके। अतः अपनी वापसी–यात्रा के दौरान रमन ने स्वयं इसे समझने के लिए प्रयोग करने का निश्चय किया।

रमन की तर्क-यात्रा

रमन को मालूम था कि क्वांटम यांत्रिकी के अनुसार प्रकाश कण की तरह व्यवहार करता है और इसके कण को 'फोटॉन' कहते हैं। जब 'फोटॉन' किसी द्रव की ओर आपतित होता है, तब या तो वह अणुओं के बीच व्याप्त अंतर-आणविक स्थान में से गुजर सकता है या फिर द्रव के किसी अणु से ऊर्जा का आदान-प्रदान करते हुए प्रकीर्णित हो कर बाहर निकल जाता है। ऐसा स्थिति में प्रकीर्णित प्रकाश में तीन प्रकार के 'फोटॉन' मिल सकते हैं। उदाहरण के लिए 'हरे' प्रकाश का 'फोटॉन' प्रकीर्णित हो कर 'पीले' या 'नीले' रंग के फोटॉन के रूप में भी मिल सकता है। लेकिन, इसकी प्रायोगिक पुष्टि कर पाना आसान कार्य नहीं था। अतः उन्होंने द्रव के अणुओं से प्रकीर्णन के विधिवत अध्ययन के लिए प्रयोग डिज़ाइन किया। अपने प्रयोग में उन्होंने 'बैंगनी' प्रकाश स्रोत का चयन किया। उन्हें सामान्य अपेक्षानुसार प्रकीर्णित प्रकाश में 'बैंगनी' प्रकाश मिला। लेकिन, वे इसके अलावा अन्य रंगों के प्रकाश की उपस्थिति के बारे में भी 'आस' लगाये बैठे थे, क्योंकि उनका मानना था कि 'फोटॉन' अणुओं से टक्कर के दौरान ऊर्जा का विनिमय अवश्य करता है। अतः इस आदान-प्रदान की सूचना प्रकीर्णित प्रकाश में अवश्य मिलना चाहिए।

रमन के गंभीर और तर्कजन्य प्रयोग

उस समय प्रकीर्णित प्रकाश के अध्ययन के लिए प्रयोगशालाओं में स्पेक्ट्रोग्राफ का इस्तेमाल किया जाता था। इसमें 'फोटोग्राफिक प्लेट' पर 'स्पेक्ट्रम' को रिकार्ड किया जाता था। आशांवित रमन ने अब प्रकीर्णित प्रकाश के रास्ते में ग्रीन फिल्टर का इस्तेमाल करने का निश्चय किया। लेकिन एक समस्या सामने आई। उन्हें अपनी सोच के अनुरूप कुछ-कुछ संकेत तो मिले, लेकिन प्रकीर्णित प्रकाश में कुछ रंगों की तीव्रता इतनी कम थी कि वह 'फोटोग्राफिक प्लेट' पर अपना प्रभाव ही नहीं छोड़ पा रही थी। अतः रमन ने इन रंगों के प्रकाश को रिकार्ड करने के लिए 'एक्सपोजर टाइम' को बढ़ाने का निर्णय लिया। कई घंटों के एक्सपोजर से रमन विभिन्न रंगों के प्रकीर्णित प्रकाश को संसूचित करने में सफल हो गए। लेकिन, अब वास्तविक चुनौती सामने आई और वह यह प्रमाणित करना कि जिसे वे एक नये 'प्रभाव' के रूप में देख रहे हैं, वह वास्तव में नया है। इसके लिए सबसे पहले उनका ध्यान द्रव की 'शुद्धता' पर गया। उन्होंने सोचा कि जिसे वे नया समझ रहे हैं, हो सकता है कि वह द्रव में उपस्थित किसी 'अशुद्धि' के कारण हो। अतः रमन ने 50 अतिशुद्ध द्रवों को तैयार किया तथा इन पर प्रयोग करना आरंभ किया। एक-एक कर के हर द्रव में उन्हें आशानुरूप परिणाम मिले। इसतरह वे सुनिश्चित करने में सफल हो गये कि जो कुछ वे देख रहे हैं, वह बिल्कुल नया प्रभाव है तथा 'अशुद्धि-जन्य' नहीं है लेकिन, फिर उनके दिमाग में एक और बात आयी। उन्होंने सोचा कि हो सकता है कि उनके द्वारा देखा गया 'प्रभाव' सचमुच ही नया नहीं हो, बल्कि वह 'प्रतिदीप्ति-जन्य' हो। ऐसे में उन्हें लगा कि अभी 'फुलप्रूफ' बनाने के लिए उन्हें कुछ और प्रयोग करना हैं।

रमन को मालूम था कि 'प्रतिदीप्ति' से मिलने वाला प्रकाश 'ध्रुवित' नहीं होता जब कि 'प्रकीर्णित प्रकाश''ध्रुवित' होता है। अतः उन्होंने अपने प्रभाव को स्थापित करने के लिए अपने अंतिम प्रयोग में पोलेराइजर का इस्तेमाल किया। उन्हें प्रकीर्णित प्रकाश 'ध्रुवित' मिला। इसे देख कर वे खुशी से उछल पड़े कि जो कुछ उन्होंने खोजा है, वह सर्वथा नया प्रभाव है। यह वह प्रभाव है, जो अणुओं के अध्ययन में अहम् भूमिका निभा सकता है तथा उनका पहचानपत्र बन सकता है। यह दिन 28 फरवरी 1928 था और इसी दिन उन्होंने इसकी घोषणा

रमन के इस प्रायोगिक प्रदर्शन ने अणु के अंदर चल रही श्वसन और नृत्य से जुड़ी गतिविधियों के माध्यम से अणुओं को पहचानने तथा चहेते अणुओं के संसार को गढ़ने के लिए ब्लूप्रिंट को विकसित करने का आइडिया दे दिया। यही कारण रहा कि वैज्ञानिकों ने उनकी खोज के महत्त्व को पहचानने में देर नहीं लगाई।

की। वैज्ञानिक जगत में इसे 'रमन प्रभाव' के नाम से जाना गया। भारत के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक मेघनाद साहा ने इस घोषणा के बाद कहा कि 'एक भारतीय ने अपने प्रयोग से यूरोप की उस कल्पना को साकार कर दिखाया है, जिसे वे स्वयं सिद्ध नहीं कर सके थे।' इस महान खोज के लिए उन्हें सन् 1930 के भौतिकी के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

रमन का जादू : एक-वर्णी प्रकाश से बहु-वर्णी प्रकाश

विश्व के वैज्ञानिकों को 'रमन प्रभाव' देखना किसी जादू से कम नहीं लगा। एक समय में इसीतरह का एक जादू आयजक न्यूटन ने दिखाया था। लेकिन,जहाँ न्यूटन ने 'श्वेत प्रकाश' को प्रिज्म से गुजार कर उसमें छिपे 'सात रंगों' को अलग कर के दिखाया था, वहीं रमन ने 'एक-वर्णी' प्रकाश की अणुओं से अंतःक्रिया करा करउसे 'बहु-वर्णी प्रकाश' में बदल कर जादू दिखाया था। इस तरह अपनी समुद्री यात्रा के दौरान उठी जिज्ञासा का तर्कजन्य समाधान खोजते हुए रमन ने दिखा दिया कि किसतरह एक 'फोटॉन' 'अणुओं' से अंतःक्रिया कर जब विकर्णित हो कर बाहर आता है, तब वह अपने साथ उसकी संरचना संबंधी 'जानकारियों' को ले कर आता है। इन जानकारियों को उसके स्पेक्ट्रम से प्राप्त किया जा सकता है। रमन प्रभाव के अध्ययन से हमें पता चलता है कि 'बाहर से शांत दिखाई देने वाला अणु वास्तव में अंदर से शांत नहीं होता' और उसकी आंतरिक दुनिया बहुत गतिशील होती है। दो या दो से अधिक परमाणुओं से बनने वाले अणुओं के नाभिक लगातार 'कम्पन' करते रहते हैं वे एक निकाय बनाते हुए अपनी अक्ष के परितः 'घूर्णन' भी करते रहते हैं। इसतरह रमन प्रभाव के अध्ययन के दौरान जो 'स्पेक्ट्रम' मिलता है, वह वास्तव में अणुओं का 'फिंगरप्रिंट' होता है। इस तरह आणविक अध्ययन के गहन अध्ययन के लिए 'रमन प्रभाव' वैज्ञानिकों को एक 'टूल' के रूप में मिल गया।

वैज्ञानिकों को रमन प्रभाव के महत्त्व को पहचानने में देर नहीं लगी

रमन के इस प्रायोगिक प्रदर्शन ने अणु के अंदर चल रही श्वसन (कम्पन गति) और नृत्य (घूर्णन गति) से जुड़ी गतिविधियों के माध्यम से अणुओं को पहचानने तथा चहेते अणुओं के संसार को गढ़ने के लिए ब्लूप्रिंट को विकसित करने का आइडिया दे दिया। यही कारण रहा कि वैज्ञानिकों ने उनकी खोज के महत्त्व को पहचानने में देर नहीं लगाई। जैसे ही 28 फरवरी 1928 को इसकी घोषणा हुई, विश्व की विभिन्न प्रयोगशालाओं में इस प्रभाव पर आधारित अनुप्रयोगों पर कार्य आरंभ हो गए। और, लगभग 12 वर्षों के भीतर ही वैज्ञानिकों ने करीब १८०० शोधपत्र प्रकाशित 2500 से अधिक पदार्थों के अणुओं की भीतरी दुनिया की झाँकियाँ देखने में सफलता प्राप्त करली।

लेसर की खोज : पैदा हुआ नया उत्साह रमन प्रभाव में

इस खोज के लगभग 32 वर्षों के बाद 1960 में थ्योडोर मैमन (Theodore Maiman) ने रूबी लेसर (Light Amplification by Stimulated Emission of Radiation) का आविष्कार किया। लेसर से मिलने वाला प्रकाश एक-वर्णी, कला सम्बद्ध तथा बहुत ही शक्तिशाली होता है। ठोस अवस्था में प्राप्त 'रूबी लेसर' के बाद 'गैस लेसर' के रूप में 'हीलियम-नियान लेसर' का आविष्कार हुआ। फिर भारत में जन्में चंद्रकुमार नरेन भाई पटेल ने 'कार्बनडायआक्साइड लेसर' का आविष्कार किया, जिसने इसके औद्योगिक अनुप्रयोगों के रास्ते खोले। इसके साथ ही 'अर्द्धचालकों' का उपयोग कर 'लेसर डायोड' का आविष्कार हुआ, जिसने आगे चल कर 'संचार प्रौद्योगिकी' में अपनी अहम् भूमिका निबाही। इन सभी'लेसर'से एकवर्णी कला-संबद्ध प्रकाश मिलता था। लेकिन, शीघ्र ही 'ट्यूनेबल डाई लेसर' का आविष्कार हो गया, जिससे एक ही स्रोत से अलग-अलग आवृत्तियों पर कलासंबद्ध प्रकाश को प्राप्त करना संभव हो गया। इस लेसर के आविष्कार से किसी पदार्थ के अलग-अलग आवृत्तियों पर 'रमन प्रभाव' के अध्ययन की सुविधा हो गई। आज 'अवरक्त से लगा कर पराबैंगनी तक की रैंज' में विकिरणों को उत्पन्न करने वाले 'लेसर' मौजूद हैं। 'लेसर' की खोज के बाद अणुओं को पहचानने में अब 'रमन प्रभाव' के रूप में मिला 'टूल'वैज्ञानिकों के सामने बहुत ही सशक्त और सामर्थ्यवान टूल बन कर सामने आ गया, क्योंकि उसके पहले इस प्रभाव के अध्ययन में 'मरक्युरी लैम्प'का स्रोत के रूप में उपयोग करना प्रचलन में था। इससे अणुओं के 'फिंगर प्रिंट' को पाने में घंटों का समय लग जाता था। लेकिन, लेसर के आने से अब इसे चुटकी बजाते ही पाने की संभावना जाग गई तथा अत्यंत कम मात्रा में उपलब्ध पदार्थों का अध्ययन करना भी आसान हो गया। इससे रसायनज्ञों, जीवशास्त्रियों तथा विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत वैज्ञानिकों को अपने शोध-कार्यों को आगे बढ़ाने

में बहुत मदद मिलने लगी तथा'रमन प्रभाव' को 'रमन स्पेक्ट्रोस्कोपी' के रूप में स्थापित कर दिया। रमन स्पेक्ट्रोमीटर की सहायता से सेमी-मैग्नेटिक क्रिस्टलों (semi-magnetic crystals) में स्पिन तरंग (magnons) को संसूचित किया जा सकता है।

विभिन्न क्षेत्रों में रमन प्रभाव के अनुप्रयोग

शीघ्र ही तकनीकी विकास ने 'रमन प्रभाव' पर आधारित 'रमन माइक्रोस्कोपी' को जन्म दिया जिसकी सहायता से प्रोटीन, कोशिकाओं तथा शरीर के अंगों का अध्ययन संभव हो गया है। इन अध्ययनों में 'निअर इंफ्रारेड लेसर' का उपयोग किया जाता है। इससे 'नमूनों' के नष्ट होने की संभावना अत्यंत कम हो जाती है तथा जीवों की जीवित अवस्था में ही अध्ययन संभव हो जाता है। इस तरह के अध्ययन से 'जीव' की वर्तमान स्थिति को जाना जा सकता है। हालांकि, चट्टानों आदि जैसे अकार्बनिक नमूनों के अध्ययन के लिए व्यापक तरंगदैर्ध्य पैदा करने वाले लेसर का उपयोग किया जा सकता है।

इस तरह नयी संभावनाओं का पता लगाने तथा नये अनुप्रयोगों के लिए भूगर्भशास्त्र, पदार्थ विज्ञान, पेट्रो-रसायन, पॉलीमर विज्ञान, औषधीय उद्योग, जीव विज्ञान, अपराध विज्ञान आदि जैसे विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत वैज्ञानिक रमन प्रभाव से जन्मी रमन स्पेक्ट्रोस्कोपी में शोध के लिए नये सिरे से जुट गये।

पुरातत्वीय तथा प्रागेतिहासिक खोजों में रमन प्रभाव

प्रागैतिहासिक काल की पेंटिंग में पेंटर किन रंजकों का उपयोग करते थे कि आज तक वे बिना अपनी चमक खोए दिखाई देती है। इसे जानने के लिए पहले रसायनिक विधियों को प्रयुक्त किया जाता था। इनमें नमूने को पूरी तरह नष्ट करना पड़ता था। इसके बाद 'इंफ्रारेड स्पेक्ट्रोस्कोपी' का प्रयोग आरंभ हुआ। लेकिन, इसमें भी समस्या जस की तस बनी रही। इसके बाद 'रमन स्पेक्ट्रोस्कोपी' का प्रचलन आरंभ हुआ। इसमें 'रमन माइक्रो-प्रोब' पर आधारित 'माइक्रोस्कोप' को प्रयुक्त किया जाता है तथा नमूनों पर लेसर-किरणों को आपतित कर प्रकीर्णित होने वाले प्रकाश का अध्ययन कर जानकारी जुटाई जाती है। इस तकनीक में नमूना सुरक्षित रहता है। आज विभिन्न अणुओं का अध्ययन कर 'रमन स्पेक्ट्रल रेखाओं' के 'डाटाबेस'पर आधारित 'स्पेक्ट्रल कैटलॉग' उपलब्ध है। यह 'पुरातत्वीय' तथा 'प्रागैतिहासिक' खोजों में जुटे वैज्ञानिकों के अध्ययन में जुटे वैज्ञानिकों के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो रहा है।

रमन स्कैनर्स का आगमन : पदार्थों के बारे में त्वरित और सटिक जानकारी

आज के समय में रमन स्पेक्ट्रम का विश्लेषण उन कुछ महत्त्वपूर्ण तकनीकों में से एक है, जिसकी सहायता से किसी भी पदार्थ की रसायनिक संघटकों और उनकी संरचनाओं से जुड़ी महत्त्वपूर्ण जानकारियों को अत्यंत शीघ्रतापूर्वक और आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिए 'रमन स्कैनर्स' भी उपलब्ध हैं। ये खतरनाक और विस्फोटक पदार्थों को बहुत दक्षतापूर्वक संसूचित कर सकते हैं। इनका कार्यकारी सिद्धांत बहुत सरल है। जब इन पदार्थों पर प्रकाश का पूंज आपतित किया जाता है तो ये उनकी आणविक संरचना को संसूचित कर लेते हैं। इस दौरान आवृत्ति में जो बदलाव मिलता है, वह स्कैन की जा रही वस्तु की 'आणविक संरचना' को प्रदर्शित करता है। इनमें लेसर का उपयोग होने से परिणाम बहुत ही सटिक मिलते हैं। इसतरह स्मग्लरों द्वारा किसी भी छिपा कर ले जाई जा रही कोई वस्तु, बम आदि को पहचान कर बड़ी दुर्घटनाओं को रोकने में बहुत मदद मिलती है।

कैंसर कोशिकाओं को पहचानने में रमन प्रभाव

कैंसर कोशिकाओं को पहचानने के लिए वैज्ञानिकों ने गोल्ड-सिलिका नैनो-कणों (जो हमारे एक बाल की मोटाई से भी कई हजार गुना छोटे होते हैं) का इस्तेमाल कर 'रमन स्पेक्ट्रोस्कोपी' की मदद ली जाती है। इन नैनो कणों पर ऐसे पदार्थ की कोटिंग की जाती है, जिसे 'रमन स्पेक्ट्रोस्कोपी' की सहायता से पहचाना जा सकता है। इनमें कणों में एक 'हुक' आकार का 'पेप्टाइड' अणु होता है, जो कैंसर कोशिका से संबद्ध हो जाता है।

'गोल्ड नैनो-कणों' की एक विशेषता है कि ये रमन स्पेक्ट्रोस्कोपिक अध्ययन के दौरान बहुत शक्तिशाली सिग्नल तैयार करते हैं। इस तरह के नैनो-कणों को 'करेंसी' की श्याही में इस्तेमाल किया गया ताकि 'जाली' करेंसी को पहचाना जा सके। इनसे प्रकीर्णित प्रकाश एक ऐसा पैटर्न बनाता है जिसे 'रमन स्केनर' से पहचाना जा सकता है।

kapurmaljain2@gmail.com

विज्ञान कथा

समानान्तर विश्व की अन्य समय रेखा

प्रज्ञा गौतम

प्रज्ञा गौतम ने विगत वर्षों में तेजी से विज्ञान लेखन में अपनी पहचान बनाई है। आपने विज्ञान प्रगति तथा विज्ञान कथा में नियमित लेखन किया। आपने बॉटनी में स्नातकोत्तर तक शिक्षा प्राप्त की तथा विज्ञान शिक्षक के रूप में अपना कॅरियर शुरू किया। वैज्ञानिक आधार पर लेखन करने में आपको महारत हासिल है। गहरी वैज्ञानिक दृष्टि और साहित्यिक अभिरुचि के चलते आपकी रचनाएँ मुक्ता, अहा जिंदगी, कादम्बिनी आदि में प्रकाशित हुई हैं। वर्तमान में आप कोटा, राजस्थान में निवासरत हैं।

बैंगलोर में आयोजित 'भारतीय विज्ञान काँग्रेस एसोसिएशन' के सेशन में भारत के विभिन्न भागों से वैज्ञानिक और शोध-छात्र सम्मिलित हुए थे। इस सेशन में दो भौतिक-विज्ञ डॉ. घोष और डॉ. भगत अपना शोध-पत्र पढ़ने वाले थे। डॉ. घोष मंच पर आ गए थे। उनका शोध-कार्य अति विशिष्ट था, उसे सदी की एक क्रांतिकारी खोज माना जा सकता था। अपना शोध-पत्र पढ़ने से पहले उन्होंने एक छोटा सा उद्‌बोधन दिया-

"हमारी यह खोज अपने आप में विशिष्ट है और कई प्रचलित भौतिक मान्यताओं को चुनौती देने वाली है। पर अपना शोध-कार्य मैं दुनिया के सामने रख पा रहा हूँ, इसका श्रेय मैं अपने छात्र प्रेमदीप माथुर को दूँगा जो स्वयं भी एक भौतिक-विज्ञ है। यह विलक्षण बुद्धि का धनी होने के साथ-साथ बेहद साहसी भी है। मैं श्री माथुर को आमंत्रित करता हूँ कि अपने अनुभव को देश के वैज्ञानिकों के साथ साझा करे।"

श्री माथुर मंच पर आ गए। उन्होंने बोलना प्रारंभ किया- "मैं दिल्ली में रह कर पीएच.-डी. कर रहा था और कॉलेज के हॉस्टल में रहता था। पिछले कुछ माह से मैं प्रयोगशाला में दिन-रात काम कर रहा था। मुझे बहुत मानसिक थकान हो गई थी और घर की याद आने लगी थी। यूँ तो विडियो कॉलिंग के जरिए माँ-पिताजी से बात हो जाया करती थी पर अब लगने लगा था कि मैं जा कर उनके गले लग जाऊँ। पहाड़ियों के बीच बसी अपनी कॉलोनी की साफ-सुथरी सड़कों पर दौड़ लगाऊँ। अपने हॉस्टल के कमरे में, जब भी मैं लेटता तो सोचता कि काश इस दीवार में कोई दरवाजा हो और मैं सीधा अपने घर पहुँच जाऊँ। पर विज्ञान और तकनीकी के इस चरम युग में भी मुझे ऐसी कोई संभावना नज़र नहीं आती थी कि ऐसा कोई शॉर्ट-कट रास्ता बनाया जा सके।"

मैं डॉ. घोष के निर्देशन में शोध कर रहा था। उन दिनों डॉ. घोष डॉ. भगत पोस्ट-डॉक्टरल रिसर्च में संलग्न थे और एक ऐसा यंत्र बनाने में व्यस्त थे जो सुरक्षित ड्राइविंग से सम्बंधित था। यह यंत्र ड्राइविंग के समय व्यक्ति के मस्तिष्क को सक्रिय और ऊर्जावान रखता था।

मैंने डॉ. घोष से घर जाने के लिए छुट्टी चाही तो वे बोले कि तीन दिन की छुट्टियाँ हैं, तुम जा सकते हो। उन्होंने मुझे एक हैड-सैट दिया -"माथुर, तुम इसमें म्यूजिक सुन सकते हो साथ ही यह तुम्हें ड्राइविंग के दौरान नींद और थकावट से दूर रखेगा।" उनका यह हैड-सैट परीक्षण के दौर में ही था। उन्होंने मेरी कार और हैड-सैट में सेंसर लगा दिए थे ताकि मेरी स्थिति का उन्हें पता रहे और वो मेरे दिमाग की सक्रियता को माप सकें और नियंत्रित कर सकें।

उन्होंने मुझे एक हैड-सैट दिया -"माथुर, तुम इसमें म्यूजिक सुन सकते हो साथ ही यह तुम्हें ड्राइविंग के दौरान नींद और थकावट से दूर रखेगा।" उनका यह हैड-सैट परीक्षण के दौर में ही था। उन्होंने मेरी कार और हैड-सैट में सेंसर लगा दिए थे ताकि मेरी स्थिति का उन्हें पता रहे और वो मेरे दिमाग की सक्रियता को माप सकें और नियंत्रित कर सकें।

रात्रि आठ बजे भोजन के उपरांत मैं घर के लिए निकल पड़ा। 23 सितम्बर, हाँ यही तारीख थी। उस दिन उमस नहीं थी। हल्की बारिश के बाद मौसम सुहावना हो गया था। मैंने हैड-सैट पहन लिया था। पाँच दशक पूर्व का माइकल जैक्सन का 'थ्रिलर' बज रहा था और कार तेज गति से अपने गंतव्य की ओर बढ़ रही थी। रात्रि के साढ़े-बारह बज गए थे और सड़कें सुनसान थीं। सघन वन-क्षेत्र शुरू हो चुका था। आगे घाटियाँ और घुमावदार रास्ता था। 8 किमी का सफर बचा था बस। महिनों की काम की थकान थी मुझे, अब कुछ सुस्ती आने लगी थी। मैंने अपने हैड-सैट को हाई-फ्रीक्वेंसी पर सैट कर दिया।

अचानक मेरी कार अनियंत्रित होकर मुख्य सड़क से नीचे उतर गई और मुझे बड़ी जोर का झटका लगा। उसके बाद क्या हुआ मुझे याद नहीं।

जब मेरी चेतना लौटी तो सुबह हो चुकी थी। कार की खुली खिड़की से चेहरे पर पड़े पानी के छींटों और जंगल की ठंडी बरसाती हवा के स्पर्श से मेरी नींद खुल गई थी। जैसे-तैसे कार मुश्किल से स्टार्ट हुई और मैं उसको मुख्य सड़क पर लाया, पर यह क्या? आगे सड़क पर रास्ता बंद था और वन विभाग का बोर्ड लगा था 'विंध्य हिल्स टाइगर रिजर्व।' यह एक तिराहा था। एक रास्ता, जिससे मैं आया था, एक सड़क बाँयी ओर किसी अन्य शहर को जाती थी। मेरा गाँव दाँयी तरफ वाले रास्ते पर था जो कि बंद था। मैंने वन विभाग के गार्ड से पूछा तो उसने बताया कि टाइगर रिजर्व बन जाने से यह अब निषिद्ध क्षेत्र है। मुझे पुनः 30 किमी पीछे लौटना होगा और दूसरे रास्ते से गाँव पहुँचना होगा। मेरे लिए यह सूचना निराशाजनक थी।

माँ-पिताजी ने मुझे इस बारे में कभी नहीं बताया था। यद्यपि मैं इंजीनियर था और भौतिकी के क्षेत्र में शोध कर रहा था, मेरी पर्यावरण और जीव-जन्तुओं में गहरी रूचि थी। मैंने निश्चय कर लिया था कि घर जाने से पहले यहाँ घूम लेना चाहिए।

जब मैं टिकट खिड़की पर खड़ा था तो एक सज्जन मुझे घूरते हुए प्रतीत हुए। उन्होंने मेरी तरफ हाथ हिलाया और मुस्कुराए पर मैंने कोई प्रतिक्रिया नहीं की। वो मेरे पास आ गए और गर्मजोशी से मेरा हाथ पकड़ते हुए बोले, "अरे माथुर, तू बर्लिन से वापस कब आया? तेरा प्रोजेक्ट पूरा हो गया क्या?"

मैं चौंक गया था। "मैं बर्लिन कब गया? और आप हैं कौन?"

उनका चेहरा उतर गया था।

"यार, तू तीन महीने में अपने जिगरी दोस्त प्रवीण को भूल गया।"

उन्होंने मेरा हाथ छोड़ते हुए कहा।

उन्होंने ऊपर से नीचे तक मेरा अवलोकन किया। मेरे बढ़े हुए बाल और दाढ़ी, अस्त-व्यस्त वेश-भूषा से वो मेरी दिमागी हालत का आकलन कर रहे थे शायद। मैं सचमुच इस व्यक्ति को बिल्कुल नहीं जानता था पर इस बार मैं जबरदस्ती मुस्कुरा दिया और बोला, "प्रवीण तुम हो। रात मेरा एक्सीडेंट हो गया था और मैं अभी तक सदमे से नहीं उबर पाया हूँ।" मैंने बात बनाते हुए कहा। प्रवीण के होठों पर एक आश्वस्त और दोस्ताना मुस्कुराहट लौट आयी थी। मेरे टिकट के पैसे भी प्रवीण ने दे दिये थे। हम एक ही जिप्सी में थे।

गाइड ने बताया कि यहाँ बाघों के अलावा भारतीय चीते भी हैं। भारतीय चीता? शायद कुछ क्लोनिंग विधि द्वारा संवर्धित कर लिए हों। मैंने ऐसे प्रयोगों के बारे में सुना था। यहाँ के छोटे से तालाब में मैंने गुलाबी सिर वाली बत्तख और अन्य अनेक ऐसे जीव देखे जो मेरी जानकारी में लुप्त हो चुके थे। मैं मुग्ध था और आश्चर्य-चकित भी। मि. प्रवीण मेरी बगल में बैठे मुझे अपने नये रियल एस्टेट कारोबार के बारे में बता रहे थे जिसमें मेरी तनिक भी रूचि नहीं थी। उनकी बातों से मेरा सिर दुख गया था। वो शायद यहाँ अनेक बार घूम लिए थे और

जब मैं आया तब रात थी, अब दिन के प्रकाश में रास्ता बड़ा ही खूबसूरत लग रहा था। रास्ते में दोनों तरफ कचनार, गुलमोहर और अन्य जातियों के फूलदार वृक्ष थे और इस मौसम में भी वृक्ष फूलों से लदे थे। आसमानी रंग की लंबी, चपटी बसें यदा-कदा रास्ते से गुजरतीं और कारें जो अलग डिजाइन की थीं।

आज सिर्फ उस नए विचित्र से सरीसृप को देखने आए थे। मेरे लिए यह एक अद्‌भुत अनुभव था जिसमें मुझे विचित्र जीव-जंतुओं से मुलाकात के अलावा मि. प्रवीण नामक दोस्त भी प्राप्त हो गया था। और उस वक्त मुझे चलती हुई जिप्सी में पूरी पृथ्वी ही गोल-गोल घूमती प्रतीत हुई थी जब गाइड ने कहा था कि इस टाइगर-रिजर्व को बने पांच वर्ष हो चुके हैं। पिछली दीवाली पर जब मैं आया था तब यह नहीं था।

दोपहर हो गई थी। प्रवीण मुझे छोड़ने कार तक आए। उन्होंने मेरी कार को इतनी विचित्र नजरों से देखा जितना उस बड़े से अजीबोगरीब सरीसृप को भी नहीं देखा था। उसके कुछ बोलने से पहले ही मैंने हैड-सैट पहन कर कार स्टार्ट कर दी। मैं पहले ही भ्रमित था और कोई नई बात सुनने का इच्छुक बिल्कुल नहीं था।

कार को घुमा कर मैं पुनः उसी रास्ते पर ले आया, जिधर से आया था पर मेरी बदकिस्मती कि कार फिर संतुलन खो बैठी। दिन का समय था और मैं पूरी तरह चैतन्य था, फिर भी लगा कि कार सामने किसी से टकराई है, जबकि सामने कुछ नहीं दिख रहा था। एक क्षण के लिए मेरी आँखों के आगे धुंध छा गई। कुछ देर बाद जब मैं सामान्य हुआ और कार को स्टार्ट करने की कोशिश की तो वह स्टार्ट नहीं हुई।

जब मैं आया तब रात थी, अब दिन के प्रकाश में रास्ता बड़ा ही खूबसूरत लग रहा था। रास्ते में दोनों तरफ कचनार, गुलमोहर और अन्य जातियों के फूलदार वृक्ष थे और इस मौसम में भी वृक्ष फूलों से लदे थे। आसमानी रंग की लंबी, चपटी बसें यदा-कदा रास्ते से गुजरतीं और कारें जो अलग डिजाइन की थीं।

एक कार को रोककर मैंने पूछा तो कार-चालक ने बताया कि कुछ दूरी पर एक मिड-वे ढाबा और मैकेनिक की छोटी सी दुकान है। वह मुझे और मेरी कार को अजीब तरह से देखकर आगे चला गया।

थोड़ा धक्का लगाकर, थोड़ा चलाकर किसी तरह मैं दुकान तक आया।

मैकेनिक ने कहा, "यह गाड़ी कहाँ से लाए? इसके पार्ट्स तो शायद ही मिलें। खैर, आप इसे छोड़ जाइए।"

ढाबे वाले ने मेरा नोट लेने से इन्कार कर दिया और मुझे अपनी भूख बैग में पड़े बिस्किट्स को खाकर मिटानी पड़ी।

बस के लिए मुझे लंबा इंतजार करना पड़ा। भूखा-प्यासा बेहद थका हुआ जब मैं बस से उतरा तो शाम के सात बज रहे थे। मेरा किराया भी किसी भले व्यक्ति ने दिया जब कंडक्टर मुझसे अपशब्द कह रहा था। अपनी कॉलोनी की जमीन पर जब मैंने पैर रखे तो लगा जैसे मैं पंख सा हल्का हो गया हूँ। मैंने खुली हवा में एक गहरी साँस ली। मेरा अपना गाँव, अपनी कॉलोनी। थकान और भूख-प्यास से घायल होते हुए भी मैं बेहद खुश था।

मैं घुमावदार सड़क पर नीचे अपने घर की ओर चला। अपने घर की सड़क पर मैंने एक महिला को देखा जो पीछे से माँ जैसी लग रही थी।

"माँ ऽ ऽ ऽ" अपना बैग संभाले मैं पीछे दौड़ा। लंबोतरे चेहरे की उस महिला ने मुड़ कर देखा। वह माँ नहीं थी। मेरी ओर ध्यान से देखने पर उसके चेहरे पर दहशत के भाव आ गए और वह फुर्ती से सीढ़ियाँ उतर कर नीचे वाले क्वार्ट्स की तरफ चली गई। मेरा घर आ गया था। पता नहीं क्यों अंधेरा कुछ ज्यादा ही घिर आया था। रोड लाइट्स जल गईं थीं। सड़कें लगभग सुनसान थीं। इक्का-दुक्का जो लोग रास्ते में मिले थे मुझे देखकर सहम गए थे।

अब मैं घर के पिछले हिस्से में आ गया था। दो क्वार्ट्स के पिछले हिस्से आमने-सामने थे जो कि टिन शेड से ढँके हुए थे। अंदर जाने के लिए एक छोटा दरवाजा था। मैं वहाँ रुका तो हँसी ठहाकों की आवाज आ रही थी। तो, माँ यहाँ बैठी गप्पे लगा रही है।

मैंने दस्तक दी, पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। दरवाजे और दीवार के बीच एक बड़ा गोलाकार छेद था, जिसमें मैंने अपना मुँह सटा दिया ताकि अंदर का दृश्य देख सकूँ। वहाँ दो महिलाएँ और दो लड़कियाँ बैठी गप्पे लगा रही थीं पर वहाँ मेरी माँ नहीं थी। मैं निराश हो गया। एक महिला कोई मजेदार वाकया सुना रही थी।

"मेरी दादी बताया करती थीं कि दादाजी की मृत्यु के बाद घर की लाइट्स अपने आप जल जाया करती थीं।" उनकी बात अभी पूरी भी नहीं हुई थी कि पेड़ पर एक बंदर जोर से खाँसा।

"यह कौन खाँस रहा है?" एक लड़की बोली।

"मैंने अभी दरवाजे पर दस्तक भी सुनी थी।" छोटी बच्ची बोली। महिला ने जब दरवाजे की तरफ घूम कर देखा, मेरा चेहरा गोलाकार छिद्र में फँसा था, अस्त-व्यस्त! उनके मुँह से चीख निकल गई "भूऽऽऽ त ऽऽ।"

"अरे, देखो तो सही कौन है।"

दूसरी महिला ने दरवाजा खोल दिया।

"यह तो माथुर है। पी.डी. माथुर!"

उनके चेहरे पर अजीब से भाव आ गए और खटाक से दरवाजा बंद हो गया। वे लोग अपने-अपने घर में घुस गए। मैं हतप्रभ सा खड़ा रहा कि किसी से माँ-पिताजी के बारे में पूछ सकूँ पर थोड़ी ही देर में पुलिस की जीप मेरे सामने थी। मुझे गिरफ्तार कर लिया गया।

"आखिर मेरा अपराध क्या है? मैं तो अभी-अभी यहाँ आया हूँ।"

"हमें पता है, तुम अभी आए हो। हमें बहुत दिनों से तुम्हारी तलाश थी।"

मेरी कोई बात किसी ने नहीं सुनी और मैं जेल में बंद कर दिया गया। मुझे वहाँ पुलिस वालों से ही पता चलाकि मैं यहाँ पावर हाउस में सीनियर इंजीनियर हूँ। बहुत सारी डिग्रियाँ हैं मेरे पास, पर मुझे पागलपन के दौरे पड़ते हैं। मैंने एक दिन पावर हाउस का सुपर कम्प्यूटर तोड़ डाला और उसके बाद कॉलोनी में उत्पात मचाया और एक छोटे बच्चे को नदी में फेंक दिया।

अब तक मुझे आभास हो गया था कि मैं समानान्तर विश्वों की अन्य समय रेखाओं पर भटक रहा हूँ उसी तरह जैसे किसी मैट्रो स्टेशन की येलो लाइन पर चलते-चलते गलती से कोई वॉयलेट लाइन और रेड लाइन पर चला जाए।

दो दिन से मैं एक चक्रव्यूह में फँसा हुआ था। बस जगहें परिचित थीं बाकी सब बदल गया था। और हर जगह एक प्रेमदीप माथुर था मेरे ही सदृश!

सुबह मुझे मानसिक अस्पताल ले जाया गया। जब मुझे अलग-अलग कक्षों में जाँच के लिए ले जाया जा रहा था, मैं अपनी चौकस नज़रों से अस्पताल का निरीक्षण कर रहा था कि कहीं किसी दरवाजे पर सुरक्षा कम हो और मैं भाग सकूँ। मैंने जाँचों में पूरा सहयोग दिया। अर्द्ध-रात्रि में, ऊँघते हुए सुरक्षा गार्ड को चकमा देकर मैं भाग निकला।

कितने साधन बदलते हुए मैंने वह 35 किमी की दूरी तय की जबकि मेरे पास एक पैसा भी नहीं था, इसे भाव्दों में व्यक्त करना बेहद कठिन है। जब मैं उस मैकेनिक की दुकान तक पहुँचा तो सुबह के सात बज रहे थे। मैकेनिक की प्रतिभा का मैं कायल हो गया था क्योंकि जुगाड़ तकनीक से उसने मेरी कार को चलने योग्य बना दिया था। मैंने अपनी कीमती घड़ी उस मैकेनिक को प्रदान की और धन्यवाद दिया। मुझे अब इस मायाजाल से निकलना था पुलिस मुझे किसी भी क्षण गिरफ्तार कर सकती थी।

अब तक मुझे आभास हो गया था कि मैं समानान्तर विश्वों की अन्य समय रेखाओं पर भटक रहा हूँ उसी तरह जैसे किसी मैट्रो स्टेशन की येलो लाइन पर चलते-चलते गलती से कोई वॉयलेट लाइन और रेड लाइन पर चला जाए।

जब मैंने अपने हैड-सैट को हाई-फ्रीक्वेंसी पर सैट कर दिया था तो उसने मेरी मस्तिष्क तरंगों को इतना ऊर्जित और त्वरित कर दिया कि किसी क्षेत्र विशेष में जाने पर मैं खिंच कर किसी अन्य समानान्तर विश्व में चला गया था।

मुझे वह दुर्घटना वाली जगह और दिशा अच्छी तरह याद थी। मैं एक बार फिर अपनी कार को उसी जगह ले आया। अपनी दुनिया में वापस लौटने के लिए.....या फिर कहीं और??

जब मेरी तंद्रा टूटी तो मैं उसी तिराहे पर था। मेरा फोन बज उठा। डॉ. घोष थे। "हम सब तुम्हें ढूँढ रहे हैं। तुम कहाँ चले गए थे।"

"वहीं रुकना, तुम्हारे माँ-पिताजी आ रहे हैं।" आधे घंटे में माँ-पिताजी मेरे सामने थे। मेरे आँसू नहीं रुक रहे थे। उस स्थिति का वर्णन करना असंभव है। जब कम्प्यूटर स्क्रीन से मेरी कार अचानक गायब हो गई और हैड-सैट से संकेत मिलने बंद हो गए तो डॉ. घोष और भगत परेशान हो गए थे। उन्होंने मेरे माँ-पिताजी व पुलिस को सूचना दे दी थी।

और यह थी एक सामान्य यंत्र को बनाते-बनाते एक महान आविष्कार होने की कथा!

pragyamaitrey@gmail.com

कॅरियर

भूगर्भ विज्ञान

संजय गोस्वामी

संजय गोस्वामी विगत पंद्रह वर्षों से विज्ञान लेखन से जुड़े हैं आपने हिन्दी विज्ञान के क्षेत्र में तीन सौ से अधिक कॅरियर लेख लिखे हैं जो विज्ञान विषयक होते हैं। 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिये' में वे विगत लगभग पांच वर्षों से शृंखलाबद्ध लिख रहे हैं। इसके अतिरिक्त विज्ञान लेख, विज्ञान समाचार, विज्ञान कविता, विज्ञान रपट, विज्ञान समीक्षा आदि का लेखन और प्रकाशन हुआ है। कई पुरस्कारों से सम्मानित संजय गोस्वामी हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद्, भा.प.अ. केन्द्र, मुंबई के कार्यकारी सदस्य हैं। आप इन दिनों मुंबई में रहकर हिन्दी विज्ञान पत्रिका में लेखन एवं संपादन से संबद्ध हैं।

भूगर्भ विज्ञान में मुख्यतः पृथ्वी के विविध पहलुओं जैसे भूभौतिकी, जल विज्ञान, खनन, रासायनिक भूविज्ञान, समुद्र विज्ञान, वातावरणीय विज्ञान, ग्रहीय विज्ञान, जीवाश्म विज्ञान, मौसम विज्ञान, पर्यावरणीय विज्ञान और मृदा विज्ञान को व्यापक तौर पर पढ़ने व समझने का मौका मिलता है। महाद्वीपों के खिसकने, पर्वतों के बनने, ज्वालामुखी फटने के क्या कारण हैं, पर्यावरण किस तरह परिवर्तित हो रहा है? पृथ्वी प्रणाली कैसे काम करती है? हमें औद्योगिक अपशिष्ट का निपटान कैसे और कहाँ करना चाहिए? भविष्य की पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करते हुए समाज की ऊर्जा और पानी की बढ़ती माँग को कैसे पूरा किया जा सकता है, जिस तरह विश्व की जनसंख्या बढ़ रही है क्या हम उसके लिए पर्याप्त खाद्य और रेसा तैयार कर सकते हैं तथा किस प्रकार खाद्य और ऊर्जा सुरक्षा प्राप्त कर सकते हैं? ये तमाम् चीजें जियोलॉजिकल साइंस के अध्ययन क्षेत्र में हैं। जियो साइंस इतना व्यापक और विविध क्षेत्र है इसलिए उनका कार्य और कॅरिअर मार्ग विभिन्नताओं से परिपूर्ण है। इस कोर्स में पहले तीन साल स्नातक स्तर की पढ़ाई होती है। इसके बाद एमएससी में दाखिला मिलता है। भूवैज्ञानिक अर्थ के समस्याओं को सुलझाने और संसाधन प्रबन्धन, पर्यावरणीय सुरक्षा और सार्वजनिक स्वास्थ्य, सुरक्षा तथा मानव कल्याण के लिए सरकारी नीतियों को तैयार करने में प्रयुक्त अनिवार्य सूचना या डाटाबेस उपलब्ध कराते हैं। पृथ्वी और इसकी मिट्टियों, महासागरों और वातावरणों की जाँच, कृषि, मौसम के पूर्वानुमान, अभियांत्रिकी, भूमि उपयोग योजनाओं का विकास आदि के काम में भी इनकी भूमिका होती है। वे एनवायरमेंट मैनेजमेंट, ट्रेजरी मैनेजमेंट, इंफॉरमेशन सिक्योरिटी और डिजीटल फोरेंसिक्स, जियोलॉजिकल साइंसेज, डिजाइन, ईनॉलॉजी और विटीकल्चर जैसे प्रोग्राम्स को ऑर्डिनेट करते हैं भूविज्ञान में पृथ्वी सिस्टम, भूगोल में विश्लेषणात्मक तकनीक ग्लोबल हाइड्रोलॉजी, खनिज विज्ञान, पेट्रोलोजी, सेडमेंटोलॉजी और स्ट्रैटिग्राफी, भूविज्ञान में जीईओएल के बारे में संघटित ज्ञान होना चाहिये, इसके अलावा अन्य विशेष विषय में जनरल ओशनोग्राफी जीईओएल जीवाश्म ईंधन का भूविज्ञान,ऊर्जा, जलवायु और कार्बन पेट्रोलियम भूविज्ञान, खनिज और क्रिस्टलीय चट्टानों का परिचय के बारे में भी पढ़ा जाता है भूविज्ञानी, जो अर्थ साइंस, पर्यावरणीय विज्ञान के क्षेत्र में रत है, के लिए खनिज भूविज्ञानी, खनिज और तेल अन्वेषण भूविज्ञानी, भू-भौतिकी परामर्शदाता, पर्यावरण सलाहकार में करियर के विकल्प हैं। भूविज्ञान को दो प्रमुख वर्गों में विभक्त किया जाता है : भूभौतिक और भूरसायन। भौतिक भूविज्ञान के अंतर्गत खनिज विज्ञान, मृदा विज्ञान, संरचनात्मक भूविज्ञान और भूआकृतिक विज्ञान सम्मिलित हैं। ऐतिहासिक भूविज्ञान में स्तरित शैलविज्ञान (stratigraphy), जीवाश्म विज्ञान (palaeontology) तथा पुराभूगोल (palaeogeography) को सम्मिलित किया जाता है।

क्षेत्र

जियोलॉजी में अर्थसाइंस, भूभौतिकी, जल विज्ञान, समुद्र विज्ञान, मॅरीन साइंस, वातावरणीय विज्ञान, ग्रहीय विज्ञान, मौसम विज्ञान, पर्यावरणीय विज्ञान और मृदा विज्ञान को व्यापक जियोलॉजी विषय के रूप में है। मृदा विज्ञान के अंतर्गत काम करने वाले व्यक्ति पौधे या फसल विकास से जुड़ी मिट्टी के रासायनिक, भौतिकीय, जैविकीय तथा खनिजकीय संयोजन का अध्ययन करते हैं। इस विज्ञान के अनेक क्षेत्र हैं जिसमें से निम्नलिखित अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं- ऐतिहासिक जियोलॉजी, भौतिक जियोलॉजी, आर्थिक जियोलॉजी, संरचनात्मक जियोलॉजी, खनिज विज्ञान, खनन जियोलॉजी, भू-आकृति विज्ञान, शैल वर्णना, शैल विज्ञान, ज्वालामुखी विज्ञान, स्तरिक जियोलॉजी एवं जीवाश्म विज्ञान। बीएससी भू-विज्ञानी , करने के बाद यानी जियोलॉजिस्ट के रूप में कॅरियर की शुरूआत की जा सकती है। यदि इस विषय में मास्टर्स डिग्री तथा पीएच डी भी कर लें, तो अच्छी जॉब की संभावनाएं और बढ़ जाती हैं। एमएससी और पीएच डी के तहत भू-विज्ञान के महत्वपूर्ण क्षेत्रों में विशेषज्ञता हासिल की जाती है, जैसे जीवाश्म विज्ञान, खनिज विज्ञान, जल विज्ञान, वोल्कैनोलॉजी आदि।

अवसर

समय-समय पर जियोलॉजिस्ट/जीवाष्म वैज्ञानिक की भर्ती के लिए परीक्षा आयोजित की जाती है। एक जियोलॉजिस्ट को जहाँ-जहाँ काम मिल सकता है, उनमें प्रमुख हैं - प्राकृतिक संसाधन कंपनियाँ (कोल इंडिया, ओएनजीसी आदि), पर्यावरण संबंधी सलाह देने वाली कंपनियां, सरकारी संगठन, एनजीओ और कॉलेज यूनिवर्सिटी में अध्यापन और शोध। एक जियोलॉजिस्ट को इन संस्थानों में आपदा मूल्यांकन, उत्खनन और जाँच संबंधी कार्यों की देखरेख, शोध कार्य आदि करना होता है। एमएससी करने वाले युवाओं को आम तौर पर जूनियर जियोलॉजिस्ट/जीवाष्म वैज्ञानिक के रूप में नियुक्ति दी जाती है। सरकारी विभागों, जैसे जियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया, भारतीय जियोमैग्नेटिक संस्थान, एनजीआरआई, सेंट्रल ग्राउंडवॉटर बोर्ड आदि के लिए संघ लोक सेवा आयोग (यूपीएससी) द्वारा जियोलॉजिस्ट भर्ती परीक्षा आयोजित की जाती है। इसके लिए किसी मान्यता प्राप्त संस्थान से भूगर्भ विज्ञान या समकक्ष में मास्टर्स डिग्री के युवा उम्मीदवार आवेदन कर सकते हैं।

मुख्य विषय

इस विज्ञान के अनेक विषय हैं जिसमें से निम्नलिखित विषय अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं- पृथ्वी की सतह की विशेषताएं, भूमि और महासागर का वितरण और उनकी विशिष्टताएँ महाद्वीप और महासागर की उत्पत्ति, भूकंप : भूकंप का वितरण, कारण, वर्गीकरण और प्रभाव के स्थान का निर्धारण, पृथ्वी के इंटीरियर के संकेतकों के रूप में भूकंप की लहरों का केंद्र भूकंपीय बेल्ट और उनके ज्वालामुखीय गतिविधि। ज्वालामुखी : ज्वालामुखी, उनके प्रकार, उत्पाद और वितरण। सतह की प्रक्रियाएँ - मौसम, मृदा क्षरण प्रोफाइल, आपदा प्रबंधन एफिजिकल भूविज्ञान और टेक्सोनिक्स, पैलेन्टोलॉजी, क्रिस्टलोग्राफी खनिज विद्या। नदियों, वायु, ग्लेशियरों, भूजल और महासागरों के भूवैज्ञानिक कार्य। कोरल रीफ्स-प्रकार, वितरण पुराचुम्बकत्व, बर्फ आयु और मौसम, जियोमैग्नेटिक और मूल भूवैज्ञानिक समय स्केल, भू-आकृति विज्ञान के संकल्पना जियोमोर्फोलॉजी का उपयोग। ऐतिहासिक भूविज्ञान, भौतिक भूविज्ञान, आर्थिक भूविज्ञान, संरचनात्मक भूविज्ञान, खनिज विज्ञान, खनन भूविज्ञान, मृदा प्रोफाइल, भू-आकृति विज्ञान, शैल वर्णना, शैल विज्ञान, ज्वालामुखी विज्ञान, सुरक्षित पृथ्वी प्रणाली व आपदा मूल्यांकन और खनिज की के खोज के लिए अध्ययन किया जाता है। स्तरिक भूविज्ञान एवं जीवाश्म विज्ञान, जीवाष्म विज्ञान का परिचय निम्नलिखित जीवाष्मों का स्थूलीय अध्ययन न्यूम्यूलाइट्स कैलसियोला जैफरेटिस माइक्रेस्टर जीवाष्मन की आवश्यक

पात्रता

भूविज्ञान का अध्ययन 12वीं (पीसीएम) के बाद किया जा सकता है। विश्वविद्यालय पाठ्यक्रमों में प्रवेश योग्यता आधारित है। भूविज्ञान में स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम कई विश्वविद्यालयों द्वारा प्रदान किए जाते हैं। विशेष पाठ्यक्रम भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं। 12वीं के बाद (पीसीएम के साथ) आईआईटी खड़गपुर जेईई के माध्यम से छात्रों को पांच साल के अन्वेषण भूभौतिकीय कार्यक्रम में मानते हैं। बीटेक/बीई और इंजीनियरिंग में ग्रेजुएट एप्टीट्यूड टेस्ट (गेट) के बाद भूविज्ञान और भूभौतिकी में 3 सेमेस्टर एम टेक में प्रवेश किया जाता है। (31/2 वर्षीय पाठ्यक्रम) बीएससी जियोलॉजी कोर्स में आमतौर पर बारहवीं की मेरिट के आधार पर दाखिला दिया जाता है। साइंस के छात्र के लिए बारहवीं में भौतिकी, गणित, और रसायनशास्त्र होना जरूरी है । अगर किसी ने आईआईटी की प्रवेश परीक्षा पास की है, तो उसे भी एम. एससी एकीकृत पाठ्यक्रम (जियोलॉजी)/बीटेक (जियोटेक)/एम. टेक. (भूविज्ञान) में दाखिला मिलता है, भू-पर्यावरण में एक वर्ष की अवधि का स्नातकोत्तर डिप्लोमा एम.एससी./एम. टेक. (भूविज्ञान) डिग्रीधारियों के लिए खुला है।

वेतन

जियोलॉजिस्ट/जियोटैक्निकल इंजीनियर का वेतनमान 50 हजार रुपए से 80 हजार रुपए हैं। कॉलेज शिक्षण और रिसर्च एसोसिएट के रूप में वेतनमान शुरुआती तौर पर 50 से 60 हजार रुपए हैं। निजी क्षेत्रों में युवाओं की सैलरी स्किल को देखते हुए तय की जाती है।

क्षेत्र

भूविज्ञान, पृथ्वी विज्ञान का क्षेत्र है भूवैज्ञानिक विज्ञान के कई विषम क्षेत्रों - वायुमंडल, जलमंडल, चुंबकमंडल, और ऊर्जा प्रवाह और रासायनिक प्रक्रियाओं का अध्ययन करते हैं, भूविज्ञान में पृथ्वी के सिस्टम,प्राकृतिक संसाधन भूकंप, ज्वालामुखी भूस्खलन, बाढ़ और लहर का क्षरण भूवैज्ञानिक खतरों, जल विज्ञान (नदियों, महासागर, ग्लेशियरों, झीलों), ज्वालामुखीवाद, मैग्मैटिज्म, टेक्टोनिजम, पर्यावरण संरक्षण, कोयला खनन, भूजल, खनन ,पेट्रोलियम संसाधन, अपशिष्ट निपटान, वायुमंडल पृथ्वी की सतह पर संचरण या उसके निकट बीओस्फिअर, जीओस्फेयर रॉक, बाहरी वायुमंडल (मौसम) और जल मंडल का अध्ययन किया जाता है। इसके अलावा, वे पवन, भूकंप, भूस्खलन आदि जैसे प्राकृतिक खतरों से जोखिम का आकलन भी करते हैं।

भिन्न कोर्सेज

जियोलॉजी/भूभौतिक/भूरसायन में पीएचडी, बीएससी जियोलॉजी/अर्थसाइंस, बीटेक (जियोटेक) जियोलॉजी, एम.एससी जियोलॉजी/भौगोलिक भूविज्ञान, भूभौतिक/भूरसायन में एम.एससी, एम. एससी जीवाष्म विज्ञान, जियोटैक्निकल सिविल इंजीनियरिंग (बीई/बीटेक), जियोटैक्निकल इंजीनियरिंग (एमई/एमटेक) एकीकृत पाठ्यक्रम।

परिस्थितियाँ एवं विधिया, जीवाष्मों के उपयोग, जीवाष्म एवं उनका महत्व, रूगोज कोरल की आकारिकी ब्रेकियोपोड़ा ग्रप्टोलाइट ट्राइलोबाइट, इकिनोयड्स लैमेलीब्रेन्कीया, सिफेलोपोडा गैस्ट्रापोडा की आकारिकी, जीवाश्म के खोज/जांच संबंधी के लिए स्पेशल विषय है, मृदा संस्तर का परिचय, मिट्टी के रासायनिक विज्ञान एवं भूवैज्ञानिक वितरण भूवैज्ञानिक काल सारणी आदि पौधे या फसल विकास से जुड़े विषय है।

काम

वर्तमान में जियोलॉजी शिक्षा के क्षेत्र में भविष्य उज्ज्वल है। अनुसंधान करने वाले विद्यार्थियों को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, अनुसंधान रिसर्च फाउंडेशन, जियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया पृथ्वी विज्ञान विभाग, भारत सरकार, भारतीय जियोमैग्नेटिक संस्थान,मानव संसाधन विकास मंत्रालय, और अन्य प्रमुख संस्थानों, तथा पर्यावरण संबंधी एजेंसियों द्वारा अनुसंधान फेलोशिप भी प्रदान की जाती है। जियोटैक्निकल इंजीनियरिंग (पीजी कोर्स) करने वाले विद्यार्थियों को पीडब्ल्यूडी, नगर निगम, शहरी नियोजन विभाग, सरकारी पोर्ट ट्रस्ट, ओएनजीसी, एनएचएआई, भारतीय रेलवे, मेट्रो रेल निगम आदि कुछ प्रसिद्ध सरकारी क्षेत्र में साइट इंजीनियर/वैज्ञानिक के रूप में कार्य कर सकते है। निर्माण कंपनियों, परामर्श एजेंसियां, इन्फ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेंट फर्म, माइनिंग फर्म आदि कुछ प्रसिद्ध निजी में भू-तकनीकी अभियंता के रूप में कार्य कर सकते है। जियोलॉजी आमतौर पर पृथ्वी का वैज्ञानिक अध्ययन, भौगोलिक भूविज्ञान पृथ्वी की सामग्रियों का अध्ययन, सतह के परिवर्तन और पृथ्वी के इंटीरियर, और उन परिवर्तनों के कारण बलों का अध्ययन है।

मुख्य संस्थान

- इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस (आईआईएस-बेंगलूरु)- बेंगलूरु
- आंध्र विश्वविद्यालय (विशाखापत्तनम)य एम.टेक. (भूविज्ञान)
- बरकतुल्लाह विश्वविद्यालय (भोपाल)-एम. एससी.(टेक.) (भूविज्ञान)
- भारतीदासन विश्वविद्यालय (तिरुचिरापल्ली)-एम.टेक. (दूरसंवेदन)-एम.एससी. भूगोल
- बिरला इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी- (रांची)-एम.टेक. (भूविज्ञान)
- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (मुंबई)-एम.टेक. (भूविज्ञान)
- पुणे विश्वविद्यालय (पुणे) - एम.एससी. (भूविज्ञान)
- रुड़की विश्वविद्यालय (रुड़की), एम.टेक(भूविज्ञान)
- श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय (तिरुपति) - एम.एससी(भूविज्ञान)
- भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (मुंबई) -एम.एससी(भूविज्ञान)
- बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय (झांसी) स्नातकोत्तर डिप्लोमा (भूविज्ञान)
- भारतीय विज्ञान संस्थान (बंगलौर)-एम.एससी.(इंजी)श्री वेंकटेश्वर वि.वि. (तिरुपति)
- वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान, देहरादून (उत्तराखंड)
- पटना साइंस कॉलेज, पटना (बिहार)
- लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
- दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
- काशी विद्यापीठ, वाराणसी
- सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय भूविज्ञान विभाग
- मद्रास विश्वविद्यालय विभाग, चेन्नई तमिलनाडु

goswamisanjay80@yahoo.in

पर्यावरण एवं दुग्ध दिवस

सम्पूर्ण आहार के लिए दूध है न!

इरफान ह्यूमन

डॉ. इरफान ह्यूमन विगत पच्चीस वर्षों से 'साइंस न्यूज एण्ड व्यूज़' मासिक विज्ञान पत्रिका का संपादन व प्रकाशन कर रहे हैं। आप विज्ञान लोकप्रियकरण कार्यक्रमों के माध्यम से देशभर में वैज्ञानिक जागरुकता के लिए प्रयासरत हैं। आपके एक हजार से अधिक लेख प्रकाशित हुए हैं, आकाशवाणी से अनेक विज्ञानवार्ताओं का प्रसारण हुआ है, विज्ञान धारावाहिक लेखन तथा विज्ञान डाक्यूमेंट्री फिल्मों के निर्माण में आपका बड़ा योगदान है। मुंबई में साइंस फिल्म फेस्टिवल आपकी फिल्में प्रदर्शित हुई हैं। विज्ञान लेखन तथा विज्ञान लोकप्रियकरण के लिए आपको कई सम्मान प्राप्त हैं तथा कई वैज्ञानिक संस्थाओं के मानद हैं। वर्तमान में आप शाहजहाँपुर उ.प्र. में निवासरत हैं।

1 जून को विश्व दुग्ध दिवस (World milk day) मनाया जाता है। दूध एक अपारदर्शी सफेद रंग का द्रव है जो स्तनपायी प्राणियों की मादाओं के दुग्ध ग्रन्थियों द्वारा निर्मित होता है। वास्तव में दूध एक पूर्ण, स्वच्छ, स्तन ग्रन्थियों का झारण है और पौष्टिकता की दृष्टि से एक मात्र सम्पूर्ण आहार है। साधारणतया दूध में 85 प्रतिशत जल होता है और शेष भाग में ठोस तत्व यानी खनिज व वसा होती है। गाय-भैंस के अलावा बाज़ार में विभिन्न कंपनियों का पैक्ड दूध भी उपलब्ध होता है। दूध प्रोटीन, कैल्शियम और राइबोफ्लेविन विटामिन बी-2 युक्त होता है, इनके अलावा इसमें विटामिन ए, डी, के और ई सहित फॉस्फोरस, मैग्नीशियम, आयोडीन व कई खनिज और वसा होती है। दूध में कई एंज़ाइम और कुछ जीवित रक्त कोशिकाएँ भी हो सकती हैं। इंटरनेशनल डेयरी जर्नल की रिपोर्ट के मुताबिक यूनिवर्सिटी ऑफ मायने में किए गए एक शोध से यह बात साबित हो चुकी है कि जो लोग रोजाना कम से कम एक ग्लास दूध पीते हैं, वे उन लोगों की तुलना में हमेशा मानसिक और बौद्धिक तौर पर बेहतर स्थिति में होते हैं, जो दूध का सेवन नहीं करते। हमारे शरीर को लगभग तीस से अधिक तत्वों की आवश्यकता होती है। कोई भी अकेला पेय या ठोस भोज्य पदार्थ प्रकृति में उपलब्ध नहीं है जिससे इन सबको प्राप्त किया जा सके। परन्तु दूध से लगभग सभी पोषक तत्व प्राप्त हो जाते हैं। इसलिए बच्चों के लिए सन्तुलित व पूर्ण भोजन का स्तर दूध को दिया गया है।

दूध की उत्पादन का लक्ष्य 12वें पंचवर्षीय प्लान (2010-2017) में बढ़कर 26.95 लाख मैट्रिक टन करने की है जबकि 2010-11 में हमारी दूध की मांग या जरूरत 33.69 लाख मैट्रिक टन थी। यह आंकड़े यह दर्शाते हैं कि हमारी पूर्ति माँग से काफी कम है जिसके लिए हमें नस्ल सुधार से लेकर जानवरों के लिए चारा, दाना, पानी और प्रबंधन पर ध्यान देना होगा। अगर स्वादिष्ट खाद्य या पेय पदार्थों की बात की जाए तो खीर, खोआ, रबड़ी, कुल्फी, आईस्क्रीम, दही, पनीर, छेना, चीज़, मक्खन, घी, चाय, लस्सी, मट्ठा, खोआ और इससे बनने वाली मिठाइयां, सभी दूध के बिना सम्भव नहीं हैं।

हमारे देश में गाय, भैंस, भेड़ और बकरी के अतिरिक्त ऊंटनी का दूध (Camel milk) भी खूब लोकप्रिय है। ऊंटनी का दूध का सेवन से कई रोगों शरीर को फायदा पहुंचाता है, साथ ही यह शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को भी बढ़ाता है। यदि किसी व्यक्ति को दिमाग से संबंधित समस्या है तो यह दूध उसके लिए फायदेमंद रहेगा। एक शोध से भी यह साफ हो चुका है कि ऊंटनी के दूध के सेवन से मंद बुद्धि बच्चों को फायदा मिलता है। बीकानेर का राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केंद्र ऊंटनी के दूध से बने कई प्रोडक्ट भी तैयार करता है। ऊंटनी का दूध बच्चों को कुपोषण से बचाता है और इसके नियमित इस्तेमाल से वाले बच्चों का मस्तिष्क सामान्य बच्चों की तुलना में तेज़ी से विकसित होता है, इतना ही नहीं उसकी सोचने-समझने की झमता भी सामान्य से बहुत तेज होती है। ऊंटनी के दूध में भरपूर मात्रा में कैल्शियम पाया जाता

है, जिससे हड्डियाँ मजबूत होती हैं साथ ही इसमें पाया जाने वाला लेक्टोफेरिन नामक तत्व कैंसर से भी लड़ने में मददगार होता है। इसे पीने से खून से टॉक्सिन्स भी दूर होते हैं और यह लिवर को साफ़ करता है और पेट से जुड़ी समस्याओं में आराम पाने के लिए भी ऊंटनी का दूध कारगर हैं। ऊंटनी का दूध डायबिटीज़ रोगियों के लिए रामबाण है क्योंकि ऊंटनी के एक लीटर दूध में 52 यूनिट इंसुलिन पाई जाती है, जो अन्य पशुओं के दूध में पाई जाने वाली इंसुलिन से काफी अधिक है।

हम भी इस माला के मोती

विश्व पर्यावरण दिवस (World environment day) पर्यावरण की सुरक्षा और संरक्षण के उद्देश्य से 5 जून को मनाया जाता है। इस दिवस को मनाने की घोषणा संयुक्त राष्ट्र ने पर्यावरण के प्रति वैश्विक स्तर पर राजनीतिक और सामाजिक जागृति लाने हेतु वर्ष 1972 में की थी और 5 जून से 16 जून तक संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा आयोजित विश्व पर्यावरण सम्मेलन में चर्चा के बाद शुरू किया गया था। इस प्रकार 5 जून, 1974 को विश्व पर्यावरण दिवस मनाने की शुरूआत की गई। पर्यावरण (Environment) शब्द का निर्माण दो शब्दों से मिल कर बना है, पहला है परि, जिसका अर्थ है हमारे चारों ओर है और दूसरा है आवरण, जिसका अर्थ है चारों ओर से घेरे हुए। पर्यावरण उन सभी भौतिक, रासायनिक एवं जैविक कारकों की समष्टिगत इकाई है जो किसी जीवधारी अथवा पारितंत्रीय आबादी को प्रभावित करते हैं और जीवित बनाए रखने के लिए परिस्थितियों के अनुकूल बनाते हैं और हमारे जीवन की प्रत्येक घटना इसी में सम्पादित होती है। इस प्रकार एक जीवधारी और उसके पर्यावरण के बीच अन्योन्याश्रय का संबंध भी होता है। यदि देखा जाए तो हमारा पर्यावरण पृथ्वी पर मौजूद जीवित और अजीवित घटकों से मिलकर बना है। जैविक संघटकों में पृथ्वी पर जीवित वर्ग से जुड़ी सारी जैव क्रियाएँ और प्रक्रियाएँ आती हैं और अजैविक संघटकों में जीवनरहित तत्व और उनसे जुड़ी प्रक्रियाएँ सम्मिलत रहती हैं। इन घटकों स्वरूप मोतियों से बनी माला के हम भी एक मोती हैं। पर्यावरण केवल प्राकृतिक नहीं होता बल्कि नैसर्गिक पर्यावरण और मानव निर्मित पर्यावरण भी होता है। यहां ध्यान देने वाली बात यह है कि पूर्ण रूप से प्राकृतिक पर्यावरण (जिसमें मानव हस्तक्षेप बिल्कुल न हुआ हो) या पूर्ण रूपेण मानव निर्मित पर्यावरण, जिसमें सब कुछ मनुष्य निर्मित हो ऐसा सम्भव नहीं है। विभाजन के बीच एक पारदर्शी परत है, यह परत प्राकृतिक प्रक्रियाओं व दशाओं में मानव हस्तक्षेप की मात्रा की अधिकता और न्यूनता का द्योतक मात्र है। आधुनिक युग में मानव की लालची प्रवृत्ति के कारण कई पर्यावरणीय समस्याएँ खड़ी हो गई हैं और प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन इत्यादि मनुष्य को अपनी जीवनशैली के बारे में पुनर्विचार के साथ पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रेरित कर रहीं

है इसी तारतम्य विश्व में पर्यावरण दिवस का आयोजन किया जाता है। पर्यावरण प्रदूषण सामान्यतः मनुष्य के इच्छित अथवा अनिच्छित कार्यों द्वारा पारिस्थितिक तंत्र में अवांक्षित एवं प्रतिकूल परिवर्तनों के परिणाम स्वरूप उत्पन्न होता है जिससे पर्यावरण की गुणवत्ता में ह्रास होता है और वह मनुष्यों, जीवों तथा पादपों के लिए अवांक्षित तथा अहितकर हो जाता है। प्रदूषण का तात्पर्य वायु, जल या भूमि की भौतिक, रसायनिक या जैविक गुणों में होने वाले ऐसे अनचाहे परिवर्तन हैं जो मनुष्य एवं अन्य जीवधारियों, उनकी जीवन परिस्थितियों, औद्योगिक प्रक्रियाओं एवं सांस्कृतिक धरोहरों के लिये हानिकारक हों।

कई प्रकार के प्रदूषक पर्यावरण को प्रदूषित कर रहे हैं, जिन्हें दो श्रेणियों में बाटा जा सकता है, पहला निम्नीकरणीय प्रदूषक (Biodegradable pollutants) और दूसरे अनिम्नीकरणीय या (Non-biodegradable pollutants)। निम्नीकरणीय प्रदूषक वह है जिन प्रदूषक पदार्थ का प्राकृतिक क्रियाओं से अपघटन (decompose) होकर निम्नीकरण (Gradation) हो जाता है, जैसे घरेलू क्रियाओं से निकले जल-मल का अपघटन सूक्ष्मजीव करते हैं। इसी प्रकार चयापचयी (Metabolic) क्रियाओं के उपोत्पाद (By products) जैसे कार्बन डाई ऑक्साइड, नाइट्रेट्स एवं तापीय प्रदूषण (Thermal pollution) से निकली ऊष्मा आदि का उपचार प्रकृति में ही इस प्रकार से हो जाता है कि उनका प्रभाव प्रदूषणकारी नहीं रह जाता। जबकि अनिम्नीकरणीय प्रदूषक वे प्रदूषक पदार्थ होते हैं जिनका प्रकृति में प्राकृतिक विधि से निम्नीकरण नहीं हो सकता, जैसे प्लास्टिक पदार्थ, अनेक रसायन, लम्बी शृंखला वाले डिटर्जेन्ट, काँच, एल्युमिनियम एवं मनुष्य द्वारा निर्मित असंख्य कृत्रिम पदार्थ हैं। इनका हल दो प्रकार से हो सकता है, पहला इनका पुनर्चक्रण (Recycling) और दूसरा इनकी अपेक्षा वैकल्पिक अपघटित होने वाले पदार्थों का उपयोग। पर्यावरण प्रदूषण कई दूरगामी दुष्प्रभाव हो सकते हैं जैसे आणविक विस्फोटों से रेडियोधर्मिता से उत्पन्न होने वाला आनुवांशिक प्रभाव, ग्लोबल वार्मिंग से समुद्री जल स्तर का बढ़ना, ओज़ोन परत की हानि से त्वचा कैंसर के मामलों का बढ़ना, भूक्षरण से कृषि योग्य भूमि को नुकसान पहुंचना। प्रत्यक्ष दुष्प्रभाव की बात करें तो इसमें जल, वायु तथा परिवेश का दूषित होना एवं वनस्पतियों का विनष्ट होना भाामिल है, जिससे भविश्य में मनुष्य अनेक नये रोगों से ग्रसित हो सकता है। अतः आज पर्यावरण के प्रति जागरूकता की सख़्त ज़रूरत है।

महासागर को भी जानो

8 जून को विश्व महासागर दिवस (World Oceans Day) मनाया जाता है। पृथ्वी का सबसे अधिक लगभग 71 प्रतिशत भाग जल से आच्छदित है जो अधिकतर महासागरों और अन्य बड़े जल निकायों का हिस्सा होता है इसके अतिरिक्त भूमिगत, जल वाष्प और बादल के रूप में पाया जाता है। खारे जल के महासागरों में पृथ्वी का कुल 97 प्रतिशत, हिमनदों और ध्रुवीय बर्फ चोटिओं में 2.4 प्रतिशत और अन्य स्रोतों जैसे नदियों, झीलों और तालाबों में 0.6 प्रतिशत जल पाया जाता है। पृथ्वी पर महासागर जलमंडल का प्रमुख भाग है। यह खारे पानी का विशाल क्षेत्र है। यह पृथ्वी का 71 प्रतिशत भाग अपने आप से ढके रहता है, जो लगभग 36.1 करोड़ वर्ग किलोमीटर है और जिसका जिसका आधा भाग 3000 मीटर गहरा है। पृथ्वी के प्रमुख महासागरों की बात की जाए तो वे हैं-प्रशान्त महासागर (Pacific Ocean), अन्ध महासागर (Atlantic Ocean), उत्तरध्रुवीय महासागर (Arctic Ocean), हिन्द महासागर (Indian Ocean) और दक्षिणध्रुवीय महासागर (Antarctic Ocean)। ये महासागर धरती की अमूल्य निधि हैं। यदि देखा जाए तो महासागर न सिर्फ हमारी धरती पर जीवन के प्रतीक हैं और जीवन के प्रथम अंकुर इन महासागरों में फूटें हैं। महासागर पर्यावरण संतुलन में भी अपनी प्रमुख भूमिका निभाते हैं और पृथ्वी की जैवविविधता का असीम भण्डार हैं। विश्व में महासागरों और सागरों का क्षेत्रफल 367 मिलियन वर्ग किलोमीटर है।

8 जून, 2009 को पहला विश्व महासागर दिवस मनाया गया। यह दिवस सन 1992 में रियो डी जनेरियो में हुए पृथ्वी ग्रह नामक फोरम में प्रतिवर्ष विश्व महासागर दिवस मनाने के फैसले के बाद और वर्ष 2008 में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा इस संबंध में आधिकारिक मान्यता दिए जाने के बाद मनाया जाने लगा है। विश्व महासागर दिवस पर हर वर्ष पूरे विश्व में महासागर से जुड़े विषयों में विभिन्न प्रकार के आयोजन किए जाते हैं, जो महासागर के सकारात्मक अैर नकारात्मक पहलुओं के प्रति जागरूकता पैदा करने में मुख्य भूमिका निभाते हैं। विश्व महासागर दिवस मनाने का प्रमुख कारण विश्व में महासागरों के महत्व और उनके कारण आने वाली चुनौतियों के बारे में दुनिया में जागरूकता पैदा करना है। इसके अतिरिक्त महासागर से जुड़े अन्य पहलुओं जैसे खाद्य सुरक्षा, जैवविविधता, पारिस्थितिक संतुलन, सामुद्रिक संसाधनों के अंधाधुंध उपयोग, जलवायु परिवर्तन, महासागरीय प्रदूषण आदि पर प्रकाश डालना है।

आओ किसी की जान बचाएं

14 जून को विश्व रक्तदान दिवस (World Blood Donor Day) मनाया जाता है। रक्त यानी ख़ून एक शारीरिक तरल (संयोजी ऊतक द्रव) है जो रक्त वाहिनियों के अन्दर विभिन्न अंगों में लगातार बहता रहता है। रक्त वाहिनियों में प्रवाहित होने वाला यह गाढ़ा, कुछ चिपचिपा, लाल रंग का द्रव्य, एक जीवित ऊतक है। यह प्लाज़्मा और रक्त कणों से मिल कर बनता है। प्लाज़्मा वह निर्जीव तरल माध्यम है जिसमें रक्त कण तैरते रहते हैं। प्लाज़्मा के सहारे ही ये कण सारे शरीर में पहुँच पाते हैं और वह प्लाज़्मा ही है जो आँतों से शोषित पोषक तत्वों को शरीर के विभिन्न भागों तक पहुँचाता है और पाचन क्रिया के बाद बने हानिकारक पदार्थों को उत्सर्जी अंगों तक ले जा कर उन्हें फिर साफ़ होने का मौका देता है। रक्त हमारे शरीर के ऊतकों को ऑक्सीजन पहुँचाते हैं, रक्त पोषक तत्वों जैसे ग्लूकोस, अमीनो अम्ल और वसा अम्ल (रक्त में घुलना या प्लाज़्मा प्रोटीन से जुडना जैसे-रक्त लिपिड) का वितरण करता है, यह उत्सर्जी पदार्थों जैसे यूरिया कार्बन, डाई ऑक्साइड, लैक्टिक अम्ल आदि को शरीर से बाहर करता है, रक्त प्रतिरक्षात्मक व संदेशवाहक का कार्य करता है अथार्त हार्मोन्स आदि के संदेश पहुंचाता है, रक्त शरीर पीएच नियंत्रित करता है और शरीर का ताप नियंत्रित करता है साथ ही शरीर के एक अंग से दूसरे अंग तक जल का वितरण रक्त द्वारा ही सम्पन होता है।

रक्तदान में एक स्वस्थ व्यक्ति स्वेच्छा से अपना रक्त किसी ज़रूरतमंद को देता है और रक्त-आधान (ट्रांसफ्यूजन) के लिए उसका उपयोग होता है या फ्रैकशेनेशन नामक प्रक्रिया के जरिये दवा बनायी जाती है। विकसित देशों में, अधिकांश रक्तदाता अवैतनिक स्वयंसेवक होते हैं, जो सामुदायिक आपूर्ति के लिए रक्त दान करते हैं। गरीब देशों में, स्थापित आपूर्ति सीमित हैं और आमतौर पर परिवार या मित्रों के लिए आधान की आवश्यकता होने पर ही रक्त दिया करते हैं। रक्तदान से पूर्व दाताओं का मूल्यांकन किया जाता है ताकि उनके ख़ून का उपयोग असुरक्षित न रहे। जांच में एचआईवी और वायरल हैपेटाइटिस जैसी बीमारियों के परीक्षण शामिल हैं जो रक्त-आधान के जरिये संक्रमित हो सकते हैं। दाता से उसके चिकित्सा इतिहास के बारे में भी पूछा जाता है और दाता के स्वास्थ्य पर दान से कोई क्षतिकारक प्रभाव नहीं पड़े, यह सुनिश्चित करने के लिए उसकी एक संक्षिप्त शारीरिक जांच की जाती है। कितनी बार एक दाता रक्त दान कर सकता है यह दिनों और महीनों में भिन्न हो सकता है, यह इस बात पर निर्भर है कि

वह क्या दान कर रहा या कर रही है और किस देश में दान दिया-लिया जा रहा है। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका में एक दाता को पूर्ण रक्त दानों के बीच 8 हफ्ते (56 दिन) का इंतजार करना पड़ता है, लेकिन प्लेटलेटफेरेसिस दानों के लिए सिर्फ तीन दिनों का। भारत पुरूष 90 दिन और महिलाएँ 120 दिन बाद दोबारा रक्तदान कर सकती हैं। फिलहाल कोई भी स्वस्थ व्यक्ति जिसकी आयु 18 से 68 वर्ष के बीच हो रक्तदान कर सकता है। इसके लिए व्यक्ति का वज़न 45 किलोग्राम से अधिक होना चाहिए, रक्त में हिमोग्लोबिन का प्रतिशत 12 प्रतिशत से अधिक होना चाहिए, शरीर का तापमान 99.5 से कम होना चाहिए। दिए जाने वाले रक्त की मात्रा और तरीके अलग-अलग हो सकते है, लेकिन एक आदर्श दान पूरे खून का 450 मिलीलीटर होता है। इसे मैनुअली या स्वचालित उपकरण से संग्रहित किया जा सकता है। आधान के लिए इस्तेमाल किये जाने वाले खून के अधिकांश घटक का छोटा जीवन होता है और लगातार आपूर्ति बनाये रखना एक समस्या है। वर्ष 2004 में स्थापित विश्व रक्तदान दिवस का उद्देश्य सुरक्षित रक्त उत्पादों की आवश्यकता के बारे में जागरूकता बढ़ाना और रक्तदाताओं के सुरक्षित जीवन रक्षक रक्त के दान करने के लिए प्रोत्साहित करते हुए आभार व्यक्त करना है। हमे अपने जीवन में रक्तदान अवश्यक करना चाहिए। आपका रक्त किसी का जीवन बचा सकता है।

स्वस्थ शरीर का योग

21 जून को अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस (International day of yoga) के रूप मनाया जाता है। 'योग' शब्द का अर्थ है समाधि अर्थात् चित्त वृत्तियों का निरोध। वैसे 'योग' शब्द 'युजिर योग' तथा 'युज संयमने' धातु से भी निष्पन्न होता है किन्तु तब इस स्थिति में योग शब्द का अर्थ क्रमशः योगफल, जोड़ तथा नियमन होगा। इस दिन का विशेष महत्व यह है कि यह दिन वर्ष का सबसे लंबा दिन भी होता है, दूसरी ओर योग भी मनुष्य को दीर्घ जीवन प्रदान करता है। पहली बार यह दिवस 21 जून, 2015 को मनाया गया, जिसकी पहल भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 27 सितम्बर, 2014 को संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपने भाषण से की थी। 11 दिसम्बर, 2014 को संयुक्त राष्ट्र में 177 सदस्यों द्वारा 21 जून को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस को मनाने के प्रस्ताव को मंजूरी मिली। प्रधानमंत्री मोदी के इस प्रस्ताव को 90 दिन के अंदर पूर्ण बहुमत से पारित किया गया, जो संयुक्त राष्ट्र संघ में किसी दिवस प्रस्ताव के लिए सबसे कम समय है।

यदि योग के इतिहास पर दृष्टि डालें तो पाएंगे कि वैदिक संहिताओं के अंतर्गत तपस्वियों तपस (संस्कृत) के बारे में प्राचीन काल से वेदों में (900 से 500 बी सी ई) उल्लेख मिलता है, जब कि तापसिक साधनाओं का समावेश प्राचीन वैदिक टिप्पणियों में प्राप्त है। कई मूर्तियाँ जो सामान्य योग या समाधि मुद्रा को प्रदर्शित करती है, सिंधु घाटी सभ्यता (सी.3300-1700 बी.सी.ई.) के स्थान पर प्राप्त हुईं है। पुरातत्त्वज्ञ ग्रेगरी पोस्सेह्ल के अनुसार, ये मूर्तियाँ योग के धार्मिक संस्कार के योग से सम्बन्ध को संकेत करती है। यद्यपि इस बात का निर्णयात्मक सबूत नहीं है फिर भी अनेक पंडितों की राय में सिंधु घाटी सभ्यता और योग-ध्यान में सम्बन्ध है।

आज की व्यस्त जीवन शैली के कारण लोग संतोष पाने के लिए योग करते दिखने लगे हैं। योग से न केवल व्यक्ति का तनाव दूर होता है बल्कि मन और मस्तिष्क को भी शांति मिलती है। योग बहुत ही लाभकारी है। योग न केवल हमारे दिमाग, मस्तिष्क को ही ताकत पहुंचाता है। बैठे-बैठे काम करने और आरामपरस्त जीवनशैली के चलते आज बहुत से लोग मोटापे से परेशान दिखते हैं, उनके लिए योग बहुत ही फायदेमंद है। योग के फायदे से आज सब ज्ञात है, जिस वजह से आज योग विदेशों में भी प्रसिद्ध है। विश्व के हर धर्म में ध्यान और धर्मकर्म समाहित है, जिससे भारीर तंदरूस्त और रोगमुक्त रहे, फिर वह चाहें वह योग के रूप में हो नमाज़ के रूप में।

सांख्यिकी की महत्व

प्रसिद्ध भारतीय वैज्ञानिक एवं सांख्यिकीविद प्रो. प्रशांत चंद्र महालनोबिस के देश को दिए गए उल्लेखनीय योगदान के सम्मान में भारत हर वर्ष उनके जन्मदिन 29 जून को राष्ट्रीय सांख्यिकी दिवस (National Statistics Day) के रूप में मनाता है। आंकड़ों के बिना योजना निर्माण की बात कल्पना से परे है। महत्वपूर्ण आकड़ों के बिना कोई योजना पूरी नहीं हो सकती। किसी भी राश्ट्र की योजना की संरचना में सांख्यिकी का महत्पूर्ण योगदान है। सांख्यिकी सामाजिक, आर्थिक तथा प्राकृतिक समस्याओं के अध्ययन और समाधान में मदद करती है। यह भौतिक तथा सामाजिक विज्ञान को समझाने में भी महत्वपूर्ण है। हमें आभारी होना चाहिए राष्ट्रीय प्रतिदर्शन सर्वेक्षण संगठन के पिता प्रो. प्रशांत चन्द्र महालनोबिस का जिन्होंने अपने जीवनकाल में सांख्यिकी को ऊंचाइयों तक पहुंचाने में महत्वपूर्ण कार्य किया। यदि देखा जाए तो पहले की अपेक्षा आज सर्वेक्षण करना और आकड़े जमा करना बहुत आसान हो गया है। कम्प्यूटर युग में आकड़ों का डिजिटिलाइज़ेशन हो गया है। आज उपलब्ध साफ़्टवेयर्स की मदद से आँकड़ों का विश्लेषण बहुत कम समय में हो जाता है और कम्प्यूटर की एक क्लिक पर चन्द सेकण्ड में दुनिया के हर क्षेत्र के आंकड़े उपलब्ध हो जाते हैं।

research.org@rediffmail.com

आईसेक्ट का वार्षिक अधिवेशन संपन्न

आशुतोष राणा ने स्किल डिवेलपमेंट और डिजिटल इंडिया पर किया विमर्श

"एक ओर कंपनियां कहती हैं हमें लोग नहीं मिलते, वहीं दूसरी ओर लोग कहते हैं हमें काम नहीं मिलता। इसका कारण है दक्षता या स्किल की कमी। सफलता और असफलता के बीच में प्रतिभा का अंतर नहीं होता, बल्कि दक्षता का अंतर होता है।" यह बात लोकप्रिय हिन्दी फिल्म अभिनेता आशुतोष राणा ने आईसेक्ट समूह द्वारा स्किल डिवेलपमेंट पर आयोजित नेशनल कॉन्फ्रेंस में कही। मौका था, आईसेक्ट की स्किल डिवेलपमेंट एवं अन्य सुविधाओं पर आयोजित नेशनल कॉन्फ्रेंस का, जिसके अंतर्गत आईसेक्ट भारत पे कार्ड भी लॉन्च किया गया। मुख्य अतिथि के तौर पर मौजूद राणा ने भारत पे कार्ड लॉन्च करते हुए, सरकार की डिजिटल इंडिया मुहिम की सराहना की। आईसेक्ट समूह के इस आयोजन में देशभर से आए 1000 से भी ज्यादा कौशल विकास केंद्रों के प्रतिनिधियों और एटरप्रन्योर्स ने पूरे जोश और उत्साह के साथ शिरकत की। इनमें से कुछ चुनिंदा प्रतिनिधियों को पुरस्कृत भी किया गया। साथ ही, राणा ने स्किल डिवलपमेंट के क्षेत्र में आईसेक्ट समूह के प्रयासों की सराहना करते हुए कहा कि आईसेक्ट व्यावहारिक और व्यावसायिक शिक्षा की दिशा में सराहनीय काम कर रहा है। उन्होंने आगे कहा, "मूर्तिकार बाहर की चीजों से मूर्ति का निर्माण करता है जबकि शिल्पकार अंदर के वेस्ट को निकालकर उसे मूर्ति का आकार देता है। आईसेक्ट शिल्पकार की भूमिका निभाते हुए युवाओं के भविष्य को निखार रहा है।" कार्यक्रम के एक सत्र में संबोधित करते हुए आईसेक्ट समूह के डायरेक्टर सिद्धार्थ चतुर्वेदी ने भारत पे कार्ड के मारफत डिजिटल या कैशलेस ट्रांजेक्शन के फायदे गिनाते हुए कहा, "इसके माध्यम से आपको कैश की या उसकी सुरक्षा की चिंता से तो मुक्ति मिलती ही है; साथ ही आपको अपना बजट समायोजित करने में भी सहूलियत मिलती है। इतना ही नहीं, कार्ड आदि गुम जाने पर आप आसानी से उन्हें बंद करा सकते हैं और अपनी पैसे की सुरक्षा कर सकते हैं।"

इस कार्यक्रम के अंतर्गत आईसेक्ट महानिदेशक संतोष चौबे ने आगामी योजनाओं से अवगत कराते हुए बताया, "कौशल विकास के क्षेत्र में आईसेक्ट सालों से तैतींस सालों से काम कर रहा है और भविष्य में कई अन्य सेक्टरों में भी कोर्स शुरू करेगा। इसके अतिरिक्त आधार सर्विस में ऑथेंटिकेशन की सेवा भी शुरू की जाएगी। साथ ही, ऑनलाइन सुविधाओं के पोर्टल को भी आगे बढ़ाया जाएगा और कई अन्य केंद्रों को इस सेवा से जोड़ा जाएगा।" इसके अतिरिक्त वसीम-उल-हक (क्षेत्रीय प्रबंधक, सेंट्रल इलेक्ट्रॉनिक्स सेक्टर स्किल काउंसिल ऑफ इंडिया) समेत अन्य कई विशेषज्ञ वक्ताओं ने अपने विचारों और सुझावों से कार्यक्रम के उद्देश्य को सार्थक बनाया। आईसेक्ट समूह की निदेशक श्रीमती पल्लवी राव चतुर्वेदी भी कार्यक्रम में मौजूद रहीं।

> आईसेक्ट व्यावहारिक और व्यावसायिक शिक्षा की दिशा में सराहनीय काम कर रहा है। एक मूर्तिकार बाहर की चीजों से मूर्ति का निर्माण करता है जबकि शिल्पकार अंदर के वेस्ट को निकालकर उसे मूर्ति का आकार देता है। आईसेक्ट शिल्पकार की भूमिका निभाते हुए युवाओं के भविष्य को निखार रहा है।
>
> – आशुतोष राणा

रेनी वृन्द समूह की रबीन्द्र संगीत प्रस्तुति

रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय (आईसेक्ट विश्वविद्यालय) भोपाल में रवीन्द्रनाथ टैगोर जयंती पर रवीन्द्र संगीत की प्रस्तुति की गई। यह प्रस्तुति रेनी वृन्द समूह द्वारा १५ विभिन्न आवाजों और साजों से की गई। इस अवसर पर कुलाधिपति और कवि संतोष चौबे ने टैगोर के बहुआयामी सृजन को याद किया। उन्होंने कहा कि टैगोर विश्वविद्यालय विज्ञान, कला और संगीत को एकसाथ लेकर चल रहा है। उन्होंने केन्द्र की भावी गतिविधियों की जानकारी भी दी। रेनी वृंद समूह के युवा कलाकारों ने एकला चलो के साथ ही अमार बेला, जाग बिताई, मांझी गीत सहित राष्ट्र बोध, प्रकृति, संस्कृति और मनुष्य की महिमा का गान करती दस रचनाओं को गायन के लिए चुना। इस अवसर पर विश्वविद्यालय की ओर से समूह निदेशक रीना सिन्हा का अभिनन्दन किया गया। विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो.ए.के. ग्वाल, कुलसचिव डॉ. विजय सिंह, अमिताभ सक्सेना, संजीव गुप्ता, राग तेलंग, संतोष कौशिक, संगीता जौहरी, संगीता पाठक मोहन सगोरिया और रवीन्द्र जैन विशेष रूप से उपस्थित थे। कार्यक्रम का समापन राष्ट्रगान के साथ किया गया।

दैनिक जीवन में विज्ञान विषय पर कार्यशाला संपन्न

आसपास की चीजों से विज्ञान के जटिल सिध्दांतों को कैसे समझा जा सकता है, यह विभिन्न माडलों के माध्यम से प्रयोगात्मक तरीके से छात्रों ने समझा। रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविद्यालय में विशेषज्ञ के रूप में उत्तर प्रदेश के वैज्ञानिक ब्रजेश दीक्षित मौजूद थे। इसी तरह थ्रीडी मॉडल के माध्यम से छात्रों ने शरीर क्रिया विज्ञान को समझा और जाना कि शरीर के विभिन्न अंग कैसे काम करते हैं' और उन की शरीर में कहां मौजूदगी है यह समझाया सोहागपुर से आई विज्ञानकर्मी सुनीला मसीही और साक्षी ने। इस अवसर पर प्रख्यात विज्ञान लेखक डॉ. कपूरमल जैन की पुस्तक ''बनना एक वैज्ञानिक का'' और स्टीफन हॉकिंग पर केंद्रित विज्ञान पत्रिका ''इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए'' का लोकार्पण किया गया। सेंटर फॉर साइंस कम्युनिकेशन के निदेशक राग तेलंग ने कहा कि वर्तमान जीवन को विज्ञान की पुरानी अवधारणाओं और सिद्धांतों के तहत नही समझा जा सकता। इसके लिए हाइजन वर्ग के अनिश्चितता का सिध्दांत, आइंस्टीन का सापेक्षता सिध्दांत और क्वांटम फील्ड थ्योरी के नजरिये से काम लेने की जरुरत है। विज्ञानकर्मी होने के नाते उनकी कोशिश है कि नए नजरिए से जीवन को देखने की दृष्टि विकसित की जाए। इस मौके पर विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो.ए.के. ग्वाल ने कहा कि आगे भी ऐसे सहभागिता स्वरुप वाले कार्यक्रम विश्वविद्यालय में आयोजित किए जाएंगे। डॉ. संजीव गुप्ता, प्राचार्य इंजीनियरिंग, इलेक्ट्रानिकी आपके लिए के सह संपादक मोहन सगोरिया और रवीन्द्र जैन सहित बड़ी संख्या में विद्यार्थी और फैकल्टी उपस्थित थे।

अनुसृजन योजना के अंतर्गत प्रकाशित पुस्तकें

क्र	पुस्तक का नाम	लेखक का नाम	मूल्य रुपये
प्रथम चरण			
1.	खनिज और मानव	डॉ. विजय कुमार उपाध्याय	100/-
2.	भारत का अंतरिक्ष कार्यक्रम	कालीशंकर एवं राकेश शुक्ला	100/-
3.	जल संरक्षण	डॉ. डी. डी. ओझा	100/-
4.	भूमि संरक्षण	डॉ. दिनेश मणि	80/-
5.	पर्यावरणः दशा एवं दिशा	अरुण कुमार पाठक	100/-
6.	वैकल्पिक ऊर्जा के स्रोत	संगीता चतुर्वेदी	60/-
7.	प्राचीन भारत में वैज्ञानिक चिंतन	डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती	60/-
8.	इलेक्ट्रॉनिक आधारित सामरिक सुरक्षा तकनीक	डॉ. मनमोहन बाला	60/-
9.	जैव विविधता संरक्षण	मनीष मोहन गोरे	50/-
10.	दूर संचार	संतोष शुक्ला	80/-
11.	घर-घर में विज्ञान	डॉ. के. एम. जैन	80/-
12.	भौतिकी की विकास यात्रा	डॉ. के. एम. जैन	90/-
13.	नेनोटेक्नॉलॉजी	डॉ. पी. के. मुखर्जी	80/-
द्वितीय चरण			
14.	हमारे जीवन में अंतरिक्ष	कालीशंकर एवं राकेश शुक्ला	150/-
15.	वैश्विक तापन	डॉ. दिनेश मणि	100/-
16.	ई-वेस्ट प्रबंधन	संतोष शुक्ला	100/-
17.	लेजर लाईट	डॉ. पी. के. मुखर्जी	100/-
18.	न्यूक्लियर एनर्जी	अनुज सिन्हा	100/-
19.	न्यूट्रिनों की दुनिया	डॉ. के. एम. जैन	100/-
तृतीय चरण			
20.	भोजवैटलैंडः भोपाल ताल	राजेन्द्र शर्मा 'अक्षर'	150/-
21.	महासागर बोलते हैं	बजरंगलाल जेठू	250/-
22.	महासागरः जीवन के आधार	नवनीत कुमार गुप्ता	200/-
23.	ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति	महेन्द्र कुमार माथुर	200/-
24.	सूक्ष्म जीव विज्ञान	डॉ. पंकज श्रीवास्तव एवं श्रीमती तोषी जैन	200/-

25.	भारत में विज्ञान एवं विज्ञान संचार की परंपरा	विश्वमोहन तिवारी	200/-
26.	सेहत और हम	मनीष मोहन गोरे	200/-
27.	रसोई विज्ञान	पुनीता मल्होत्रा	100/-
28.	ह्यूमन ट्रांसमिशन एवं अन्य विज्ञान कथाएं	डॉ. ज़ाकिर अली रजनीश	150/-
29.	बायोइंफार्मेटिक्स	डॉ. अर्चना पांडेय	150/-
30.	हमारे प्रेरणा स्रोत भारतीय वैज्ञानिक	राम शरण दास	200/-
31.	मध्यप्रदेश की विज्ञान संचार यात्रा	चक्रेश जैन	100/-
32.	हिन्दी विज्ञान लेखनः भूत, वर्तमान एवं भविष्य	डॉ. शिव गोपाल मिश्र	200/-
33.	दैनिक जीवन में रसायन	डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती	200/-
34.	जलवायु परिवर्तन	डॉ. दिनेश मणि	150/-
35.	ग्रीन बेबी	विजय चितौरी	200/-
36.	फोरेन्सिक साइंस	डॉ. पंकज श्रीवास्तव	150/-
37.	सर्वशास्त्र शिरोमणि गणित	डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मिश्र	200/-
38.	ऊतक संवर्धन	प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव	200/-
39.	आइए लिनक्स सीखें	रविशंकर श्रीवास्तव	250/-
40.	हम क्या समझते हैं?	प्रदीप श्रीवास्तव	100/-
41.	सौन्दर्य प्रसाधनों का रसायन विज्ञान	डॉ. बबिता अग्रवाल	200/-
42.	प्रदूषण जनित रोग	डॉ. सुनंदा दास	200/-
43.	भोपाल के पक्षी	डॉ. स्वाति तिवारी	400/-
44.	पर्यावरण और मानव जीवन	डॉ. सुमन गुप्ता	200/-
45.	बच्चों के लिए विज्ञान मॉडल	बृजेश दीक्षित	100/-

पुस्तक प्राप्ति के लिए 'आईसेक्ट विश्वविद्यालय' को भुगतान के दो विकल्प :
स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, शाखाः महावीर नगर, भोपाल ब्रांच कोड : 3867,
IFSC:SBIN0003867, MICR 462002015, Account No. 32425578992

अथवा

बैंक ड्राफ्टः 'आईसेक्ट विश्वविद्यालय' को भोपाल में देय। ड्राफ्ट इस पते पर भेजेंः
निदेशक, आईसेक्ट विश्वविद्यालय, बंगरसिया चौराहे के पास,
चिकलोद मार्ग, जिला रायसेन – 464993

डाक खर्चः पांच पुस्तक तक की खरीदी पर पुस्तकों के मूल्य में डाक खर्च रु. 50/- जोड़ें। पांच से अधिक पुस्तकों की खरीदी पर डाक खर्च नहीं लगेगा।

महत्वपूर्णः खरीदी जाने वाली पुस्तकों की सूची एवं भुगतान का विवरण निम्नलिखित ई-मेल पर भेजें : cscau@aisectuniversity.ac.in